२/११-१२ १५-१-७० (११-१२)

पूछते हैं आप साईं के संबंध में?
ईशु के संबंध में?
बुद्ध के संबंध में?
लेकिन, अपने ही संबंध में मैं क्या
कहूं?
दिये भिन्न हैं, लेकिन ज्योति तो
एक है।
बांसुरी अनेक हैं, संगीत तो एक है।
लेकिन, लहरों पर रुकनेवाले सागर
को नहीं देख पाते हैं।
और, पत्तियों को पकड़नेवाले वृक्ष को
भूल जाते हैं।
द्वैत की दृष्टि सदा ही एक को अनेक
में तोड़ देती है।

२६/५/१९७०

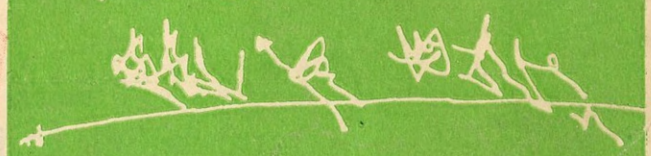

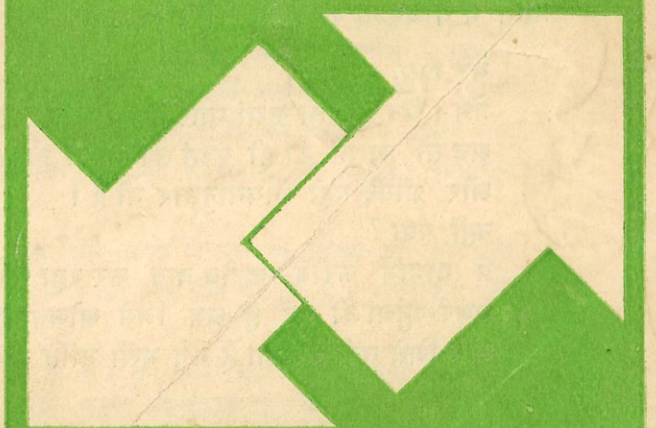

युक्रान्द

आचार्य श्री रजनीश जी की सृजनात्मक जीवन क्रांति का मासिक संकलन पत्र

—युक्रांद—

(जनवरी १९७१—संन्यास विशेषांक)

युक्रांद का यह जनवरी अंक संन्यास विशेषांक है। पूज्य आचार्य श्री को प्रेम करने वाले प्रेमी साधकों ने आचार्य श्री की वैज्ञानिक धार्मिक जीवन क्रांति को सजगता से अपने जीवन में लाने हेतु—संन्यास की धारणा से आबद्ध किया है।

पिछले दो माहों में आचार्य श्री की साक्षी में ७० साधकों ने अपने संन्यास के संकल्प को लेकर जीवन के सबसे गहरे मूल्यों को अपनाया है, जिनमें से कुछ संन्यासियों के सचित्र परिचय इस अंक में हैं।

संन्यास की इस पावन क्रांति को युक्रांद के माध्यम से हम अपने प्रेमी साधकों तक पहुंचा रहे हैं, ताकि संन्यास जीवन के बीच आ सके—जो आचार्य श्री की मूल धारणा है।

आचार्य श्री की संन्यास संबंधी मूल धारणाओं को इस अंक में आप मनन कर जिस अद्‌भुत जीवन आनंद की अनुभूति में खोयेंगे—उससे संन्यास का आपका संकल्प जीवन में घटित हो—ऐसी शुभ आकांक्षा के साथ।

—मानसेवी संपादक

प्यासों को ही कुआं तक आना होगा

(पिछले माहों आचार्य श्री ने देश के अनेक स्थलों के कार्यक्रम रद्द किये, उसके प्रसंग में ये अमूल्य पत्र प्रस्तुत हैं।)

मेरे प्रिय,

प्रेम। अब तक तो कुआं प्यासों तक जाता रहा; लेकिन शायद अब ऐसा न हो सकेगा।
अब तो प्यासों को ही कुआं तक आना होगा।
और शायद यही नियमानुसार भी है।
नहीं क्या?
मैं यात्रायें करीब—करीब बन्द कर रहा हूं।
खबर पहुंचा दी गई है—अब जिसे खोजना है, वह मुझे खोज लेगा।
और जिसे नहीं खोजना है मैंने भली भांति उसके द्वार पर भी दस्तक देकर देख ली है।

रजनीश के प्रणाम
१६-१-१९७१

[प्रतिः—श्री ओमप्रकाश अग्रवाल, N. K. 175, चरणजीतपुरा, जालंधर (पंजाब)]

(शेष दो पत्र कव्हर तृतीय पर)

अमृतसर में–

आचार्य श्री रजनीश का स्वागत

—आर० एस० शास्त्री द्वारा प्रस्तुत

नामसंकीर्तन का महत्व नारद जैसे योगी, मीरा जैसी भक्त और सूर जैसे अनन्य प्रेमी जानते थे र उन्होंने इसी स्मरण से अपने जीवन को सार्थक किया। इसका श्रवण भी बहुत लाभदायी है, किन्तु यहां जिस संकीर्तन का वर्णन होने जा रहा है, वह तो किसी शुभ कार्य में विघ्न डालने का शस्त्र होने के कारण ऐसा कर्णकटु प्रतीत हुआ कि जिससे कीर्तन के श्रद्धालुओं की श्रद्धा को भी ठेस लगने की संभावना है।

बात नवंबर के प्रारंभ की है। आज के प्रबुद्ध विचारक आचार्यश्री रजनीश अमृतसर की धरती पर पधारे थे और आपका तत्वनिर्देश संबंधी प्रवचन सुनने के लिए अमृतसर का अपार जनसमूह उमड़ पड़ा था। यह आयोजन वहां के मुख्य कार्यकर्त्ता जिनमें हिन्दू और सिख सम्मलित थे तथा श्री चिमनलालजी अग्रवाल जिनके कि घर पर आचार्य श्री रजनीशजी ठहरे हुए थे, द्वारा आयोजित था। जनता उस घड़ी की प्रतीक्षा में थी कि आचार्य श्री अपने मनोहर व्याख्यान से अब जनता को कृतकृत्य करेंगे।

आचार्यश्री अपने समय से पूर्व १० मिनट टाउनहाल में प्रविष्ठ हुए और मंच पर विराज गए।

अमृतसर के एक वयोवृद्ध ज्ञानी सरदारजी ने आपका स्वागत किया, तथा प्रवचन प्रारंभ हो गया, किन्तु वह, आचार्य श्री के संबंध में गत कुछ मासों से गलत चर्चा चल रही है, कि आप परम नास्तिक हैं। शास्त्रों के निन्दक, गीता जैसी पुस्तक की भी आप आलोचना करते हैं। इसलिए ऐसे प्रचारक के आयोजन में सम्मिलित होने की रोक वहां की जनता ने पंजाब सरकार से भी की और आप पंजाब में न आयें, यह भी मांग वहां के लोगों ने की थी।

वे लोग जब किसी भी स्थिति में आचार्यश्री को रोकने में सफल न हुए तो उन्होंने प्रवचन में विघ्न डालने के लिए, जोर-जोर से कीर्तन प्रारंभ कर दिया। कीर्तन परमात्व भाव को लाने के लिए है, पर जिस कीर्तन में घृणा और द्वेष के भाव भरे हुए हों, उस कीर्तन को कीर्तन कहना नासमझी है।

कीर्तन का लक्ष्य केवल प्रवचन में विघ्न ही था। अन्य उसका कोई भी न तो तात्पर्य ही था और न कोई भाव ही था, क्योंकि बीच में जब आचार्यश्री रुक जाते थे, तो कीर्तन भी रुक जाता था परंतु आपके साथ ही साथ माइक लगाकर जोर-जोर से कीर्तन का प्रहार प्रारंभ कर देते थे।

आचार्यश्री ने जब यह ढंग देखा तो मौन हो गए, और साथ ही हंस पड़े। वयोवृद्ध ज्ञानीजी ने जैसे ही प्रवचन के साथ-साथ कीर्तन रुका, तो माइक लेकर उन लोगों से सभ्य भाषा में सुसभ्य मनुष्यों की तरह प्रार्थना की कि वे कुछ देर के लिए आचार्य जी बात सुनने दें। आपने आगे यह भी बताया कि इस क्रिया से न केवल आप का या हमारा ही अपमान है, बल्कि अमृतसर जैसे अतिथिभक्त नगर की प्रतिष्ठा का भी प्रश्न है। किन्तु उन लोगों पर इसका प्रभाव नहीं पड़ा।

आचार्यश्री को कुछ लोग नास्तिक समझते हैं। कुछ लोग उनके विचारों को समझते नहीं और कुछ लोग समझने की चेष्टा नहीं करते। बाकी कुछ ऐसे हैं कि जिनको इनकी सत्य बात अखरती है। इसलिए वे इन्हें नास्तिक और कम्यूनिष्ट कहना शुरू कर देते हैं।

आचार्यश्री परम आस्तिक व प्रभु प्रेमी हैं। कभी-कभी सत्य को कठोर भाषा में कह जाते हैं। कठोर भाषा में कहना आवश्यक इसलिए है, कि अगर किसी सोये मनुष्य को जगाना हो, तो थोड़ी-सी ठोकर भी लगानी होती है।

दूसरी बात है, सत्य का सही ढंग से प्रतिपादन, समाज ने सत्य के मुंह को देखने के लिए जो कुछ पंडित लोगों से सुना है, आचार्यश्री उससे बिल्कुल विपरीत बोलते हैं। जैसे शास्त्र के पुजारी जब यह सुनते हैं कि

शास्त्र पढ़ना ही हमारा कर्त्तव्य नहीं, उसका मनन कर जीवन में उतारना भी हमारा कर्त्तव्य है। इसमें दो बातें हैं, एक है पढ़ना, एक है जीवन में उतारना, यहीं पर अन्तर है; क्योंकि अब तक पहला चरण कि शास्त्र पढ़ना ही लोग सुनते रहे, पर आचार्यश्री ने दूसरे चरण को संभाला, कि पढ़ो और जीवन में उतारो।

जो श्रद्धावान है, उसे ज्ञान अवश्य होगा। किन्तु दूसरा अगर श्रद्धालु नहीं, तो गीता का यह श्लोक, 'श्रद्धाबान्लभते ज्ञानम्' उसके करोड़ों जाप करने पर भी ज्ञान प्राप्त करने में सहायक नहीं होगा।

जो वस्तु सहायक नहीं, वह निरर्थक है। क्योंकि मनुष्य यदि ज्ञान प्राप्ति नहीं कर सका, उसके जीवन में सजगता का आविर्भाव नहीं हो पाया, तो उसका पाठ जाप-ताप और तीर्थयात्रा सभी व्यर्थ और निरर्थक हैं।

आचार्यश्री का किसी सिद्धान्त को निरर्थक बताना, इस प्रकार है—इससे वे शास्त्र निन्दक व नास्तिक किस प्रकार हो सकते हैं ?

विक्षेप से आचार्य श्री का प्रवचन दो दिन नहीं हो सका। लोगों को जब खाली हाथ लौटना पड़ा तो उनके राम-नाम का क्या प्रभाव पड़ा होगा ? यह राम ही जानें।

महापुरुषों की भाषायें वे ही जानें। आचार्यश्री जब व्याख्यान नहीं दे सके, तो उनका मौन व्याख्यान प्रारंभ हो गया। इतना बड़ा विक्षेप और विरोध कि पत्थर भी बरस गए, लाठी भी चल गई, फिर भी आचार्यश्री की शांति को देखकर न केवल उनके प्रेमी, बल्कि विरोधी भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके।

मैं कंपनी बाग से निकल रहा था, वहीं पांच-सात लड़के बात कर रहे थे। अरे यार यह आदमी पता नहीं किस धातु का है, जो न लाठी से डरता है, न पत्थर से और न गाली से। यह जरूर कोई अवतार है। सब लड़के इस बात पर चुप हो गए। उनकी मुख मुद्रा कह रही थी कि वे आचार्य श्री की तटस्थता पर इस आयु में भी प्रभावित हैं।

आचार्यश्री कई बातों में आज के जगत् में विचारणीय विषय बन गए हैं। धार्मिक जगत् के अतिरिक्त वे राजनीति जगत् में भी जब सत्य कहना प्रारंभ करते हैं तो कुछ लोग, अग्नि के समक्ष नकली सोने की तरह पिघलकर भाग खड़े होते हैं।

जब आप बोलते हैं कि—गांधी को गोडसे ने नहीं मारा, तो लोग आसन पर हिल जाते हैं, कि—यह क्या बात है, क्योंकि बच्चा-बच्चा यह बात जानता है कि गांधी को गोडसे ने ही मारा है।

परंतु आचार्य जी का भाव यह होता है कि—गांधी जैसे महापुरुष शरीर की दृष्टि से नहीं, भाव की दृष्टि से अमर कोटि को प्राप्त होते हैं। शरीर की महत्ता ऐसे लोगों के जीवन से तनिक भी संबंध नहीं रखती। इसलिए गोडसे ने जिस शरीर को गोली मारी थी, वह तो ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् वैसे ही अलग हो जाता है, परंतु जो लोग भावनाओं को ठेस पहुंचाते हैं, महापुरुषों के हत्यारे तो वे होते हैं।

इसी प्रसंग में जब आप गांधी वाणी का जिक्र कर आज के नेतागणों के कारनामों पर प्रकाश डाल कर कहते हैं कि—यह हैं वे लोग जो कि दिन में कई बार गांधी की हत्या करते हैं, तो समाज चौंक उठता है, क्योंकि बात विपरीत है, पर सत्य है।

यह सब बातें, जिन्हें कि समाज सुन सके, ऐसी जब तक तैयारी नहीं होगी, तब तक आचार्यश्री की बातें कटु लगें, सहन न हों, उनके विरोध प्रारंभ हो जायें, उन्हें काले झंडे दिखाये जायें, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं, क्योंकि ये ही वे सब कसौटियां हैं, जो महापुरुषों का परिचय कराती हैं। इससे आचार्य श्री की बातों के प्रति जनता का कौतूहल दिनों दिन बढ़ेगा और शीघ्र ही सत्य के प्रति आकर्षण बढ़ेगा।

—मनन (मासिक-पत्रिका)
जनवरी ७१ से साभार

संन्यास और संसार

(आचार्य श्री द्वारा जीवन के सबसे गहरे मूल्य पर जबलपुर में दी गई एक चर्चा)

संकलन : **श्री आर. आर. मिश्रा,** जबलपुर ।

संसार को छोड़कर भागने का कोई उपाय हो नहीं है, कारण हम जहां भी जायेंगे वह होगा ही, शक्लें बदल सकती हैं । इस तरह के त्याग को मैं सन्यास नहीं कहता । सन्यास मैं उसे कहूंगा कि हम जहां भी हों वहां होते हुये भी संसार हमारे मन में न हो । अगर तुम परिवार में भी हो तो परिवार तुम्हारे भीतर बहुत प्रवेश नहीं करेगा । परिवार में रहकर भी तुम अकेले हो सकते हो और ठेट भीड़ में खड़े होकर भी अकेले हो सकते हो ।

इससे उल्टा भी आवश्यक नहीं है, इससे उल्टा भी हो सकता है कि एक आदमी अकेला जंगल में बैठा हो लेकिन मन में पूरी भीड़ घिरी हो और ठेट बाजार में बैठकर भी एक आदमी अकेला हो सकता है, तो सन्यास की जो अब तक व्यवस्था रही है, उसमे सम्यक पर कोई ध्यान नहीं दिया गया वह सिर्फ समाज की व्यवस्था है । इसलिये मेरी समझ में तो सन्यास की ठीक उल्टी व्यवस्था है । उसमें गलत त्याग पर ही अब तक जोर रहा है । उसके दूसरे पहलू पर कोई जोर नहीं है, एक आदमी के पास पैसा न हो तो भी उसके मन में पैसे का राग चल सकता है । इससे उल्टा भी हो सकता है । जिसके पास पैसा हो और पैसे का कोई लगाव उसके मन में न हो, बल्कि ज्यादा संभावना दूसरे की ही है, पैसा बिलकुल न हो तो पैसे में लगाव की संभावना ज्यादा है, पैसा हो तो पैसे से लगाव छूटना ज्यादा आसान है । जो भी चीज तुम्हारे पास है उससे तुम आसानी से मुक्त हो सकते हो । असल में तुम मुक्त हो ही जाते हो । सिर्फ गरीब आदमी को ही पैसे की याद आती है । अगर किसी अमीर को भी आती है तो उसका कुल मतलब इतना है कि अभी भी वह अमीर नहीं हो पाया है, तो मैं अमीर की परिभाषा यही करता हूं कि जिसे अब पैसे की याद ही न आये और गरीब मैं उसको कहता हूं कि जिसे पैसे की याद बनी रहे । भूखे आदमी को भोजन की याद आती है और भरे पेट वाले आदमी को भोजन की याद नहीं आती है, जब तक की भूखा आदमी भोजन के लिये पागल और विक्षिप्त न हो, अगर "मैनिया" हो, तो बात अलग, नहीं तो भरा पेट आदमी भोजन को भूल जाता है । जब तुम नंगे खड़े होगे तब तुम्हें कपड़े की याद आयेगी,जब तुम कपड़े पहने रहते हो तब तुम्हें कपड़े की बिलकुल याद नहीं आती है और नहीं आना चाहिये । कोई आवश्यकता ही नहीं हैं क्योंकि मन का नियम ही यही है । जो नहीं है उसकी वह तुम्हें चेतावनी देता है उसकी वह खबर कर देता है कि तुम नंगे हो कपड़े नहीं हैं तुम्हें सर्दी लग रही है या तुम भूखे बैठे हो पेट में भूख दौड़ रही है । और भोजन नहीं है । मन का काम वही "रेडार" की तरह है कि वह तुम्हें खबर दे कि क्या हो रहा है और क्या नहीं हो रहा है । जो चीज तुम्हारे पास है उसे भूलना आसान है और जो तुम्हारे पास नहीं है उसे भूलना जरा कठिन है लेकिन अब तक सन्यास का अर्थ बिलकुल त्याग समझा जाता रहा है इसका मतलब जो आदमी छोड़कर चला जाता है वह सन्यासी नहीं । मेरे विचार से वह आदमी त्यागी होगा सन्यासी नहीं । सन्यास त्याग पर एक और शर्त लगा देता है । वह शर्त यह है कि त्याग भी ठीक हो । अब ठीक त्याग क्या होगा । ठीक त्याग मेरी दृष्टि में वह है कि तुम कुछ भी छोड़कर नहीं जाते लेकिन तुम्हारे

भीतर से सब छूटना आरम्भ हो जाता है। पत्नि से मुक्त होने के लिये पत्नि को छोड़कर जाने का कोई अर्थ नहीं उसके साथ रहते हुए भी तुम पत्नि के भाव से मुक्त हो सकते हो । बेटे को छोड़कर भागने की कोई आवश्यकता नहीं है, लेकिन उसके पास रहते हुए तुम पिता का जो आग्रहपूर्ण रुख है, उससे मुक्त हो सकते हो। तो संसार ही सन्यास बन सकता है। ऐसी मेरी दृष्टि है । जिस सन्यास की मैं चर्चा कर रहा हूं, उसको संसार से विपरीत और भिन्न और अलग नहीं रखना है। ठीक संसार में और यह केवल अगर शाब्दिक या दार्शनिक स्तर पर होता तो मैं इसकी बहुत ज्यादा चिंता न करता। इसके व्यापक परिणामों में फर्क पड़ेगा। जब सन्यासी को संसार से तोड़ लेते हैं तो हम दुनिया को दो भागों में बांट देते हैं। एक ओर सन्यासी हो जाते हैं, एक ओर संसारी हो जाते हैं। संसारी जाने अनजाने अपने मन यह मान लेता है कि मुझे तो बुरा होने की सुविधा है क्योंकि मैं संसारी हूं। वह चोरी करे, काला बाजारी करे, वह झूठ बोले तो उसको जस्टिफिकेशन होता है। उसके मन में वह कहता है कि संसारी हूं ये मुझे करने ही पड़ेंगे और अगर सन्यासी कहे कि ये गलत है, तो वह कहता है कि अगर आप संसार में रहेंगे तो आपको करना पड़ेगा। आप नहीं कर रहे हो क्योंकि आप सब छोड़ कर चले गये हो तो मुझे तो करना ही पड़ेगा। क्योंकि यहाँ जिया नहीं जा सकता है। जब हम संसार को छोड़ देते हैं, हम संसारी के अच्छे होने में बाधा डालते हैं। और बुरे होने के लिए संगति जुटाते हैं। जस्टिफिकेशन जुटाते हैं। उसको लगता है कि यहाँ बुरा होना ही पड़ेगा क्योंकि वह कह भी सकता है कि अगर यहाँ बुरा होना अनिवार्य नहीं है तो सन्यासी छोड़ के क्यों भाग गया है। वह यहीं अच्छा हो जाय तो संसार में होना और बुरा होना पर्यायवाची हो जाता है। यह बड़ी खतरनाक बात है, खतरनाक इसलिये है कि दुनिया में कितने लोग सन्यासी होंगे और जो सन्यासी होंगे वे भी संसारियों पर भी निर्भर होंगे। अगर ४० करोड़ का देश सन्यासी हो जाय तो एक दिन एक भी सन्यासी जीवित नहीं रह सकता जबकि करोड़ों लोग सन्सारी हों तब ही हम १०, १५, १००, २०० सन्यासियों को पाल सकते हैं। तो जो सन्यासी अपने जीवन के लिए सन्सारी पर आधारित होता हो तो उसका संसार से मुक्त होना बिलकुल नासमझी की बात है। वह मुक्त नहीं है याने वह विरोध करता है कि काला बाजारी बुरी और काला बाजारी पर ही उसका आश्रम भी होगा। और कोई उपाय नहीं अगर वह विरोध करता हो जिन चीजों का उन्हीं चीजों को करने वाले पर उसका जीवन निर्भर होगा। यहाँ वह विरोध भी करता रहेगा। लेकिन वह आश्रित होगा और जो सन्यासी किसी पर आश्रित हो, स्वतंत्र नहीं हो सकता है । ऊपर से उसकी स्वतन्त्रता दिखाऊ होगी, वह गहरे में फंसा हुआ होगा, अगर वह जैनी सन्यासी है तो वह जैनियों का गुलाम होगा, हिन्दू सन्यासी है तो हिन्दुओं का गुलाम होगा, मुसलमानों सन्यासी है तो मुसलमानों का गुलाम होगा क्योंकि जिनके कारण वह जी रहा है उनकी धारणायें उनके नियम उनकी मर्यादायें उसे स्वीकार करनी पड़ेंगी। वह इंच भर यहां वहां हिल नहीं सकता सन्यासी गुलाम हो जायगा। अगर सन्यासी गुलाम हो गये तो वह सन्यासी नहीं रहा। स्वतन्त्रता तो उसका मूल आधार है और संसारी अपनी बुराई में निश्चित हो जायगा। उसे लगेगा कि उसे बुरा होना ही पड़ेगा इससे बचने का कोई रास्ता नहीं। वह कभी संयासी हो जायगा तो फिर बुराई के बाहर हो जायगा और उसकी प्रतिज्ञा करेगा, सारा जगत सन्यासी नहीं हो सकता। इमानुएल कांट का एक बहुत अद्भुत नियम है कि जो नियम सार्वभौम न बनाया जा सके वह नियम नैतिक नहीं कहा जा सकता जिस नियम को हम यूनिवर्सल न बना सकें। इसे समझ लें कि नियम सार्वभौम बनाने से अपने आप टूट जाता है, जैसे झूठ बोलना है अगर सारी दुनिया झूठ बोलने लगे तो झूठ बोलना बिलकुल बेकार हो जायगा। झूठ बोलना तभी तक ठीक चल सकता है कि जब कुछ लोग सच बोलते हैं और सच बोलने में भरोसा रखते हैं। झूठ बोलने वाला भी सच बोलने वाले पर जिन्दा रहता है नहीं तो जिन्दा नहीं रह सकता है अगर इस बारे में हम सारे

लोग झूठ बोलने लगें, झूठ बिलकुल ही बेमानी हो जायगा, उसका कोई मतलब ही नहीं रह जायगा क्योंकि मैं बोलूंगा और आप जानते हैं कि मैं झूठ बोल रहा हूं और मैं बोल रहा हूं तब भी मैं जानता हूं दुनिया जानती है कि झूठ बोला जा रहा है। इसका कोई मतलब ही नहीं रहा। मेरे झूठ का लाभ तब ही तक है कि जब तक मैं दिखा पाऊं कि मैं सच बोल रहा हूं और दूसरा भी भरोसा करता है कि नहीं सच भी बोला जाता है, तब ही झूठ रहेगा। अगर सब लोग चोर हो जायें तो चोरी बेकार हो जायगी, चोरी तभी तक चलती है जब तक कुछ लोग चोर नहीं हैं। इसलिये यह एक ख्याल बहुत उचित है कि जो नियम सार्वभौम नहीं बन सकता वह नैतिक नहीं बन सकता। अगर सारे लोग सत्य बोलें तो कोई बाधा नहीं आ सकती। इससे कोई नुकसान नहीं होगा लेकिन सारे लोग झूठ बोलें तो नहीं चलेगा अगर सारे लोग संसारी हों तो कोई बाधा नहीं आती लेकिन सारे लोग सन्यासी हो तो नियम समाप्त हो जायगा, इसलिये मैं इस तरह के सन्यास को जो जीवन को छोड़ कर भागता है झूठ और चोरी के साथ ही गिनता हूं। मैं फर्क नहीं करता। क्योंकि वह अनैतिक नियम है। उसके होने के लिये संसारी पर निर्भर होना जरूरी है जबकि संसारी के लिये सन्यासी पर निर्भर होना जरूरी नहीं। अगर कल सन्यासी न हो तो संसार अपने रास्ते पर चलता रहेगा। कोई बाधा नहीं पड़ेगी। किन्तु संसारी न हो तो सन्यासी एक क्षण नहीं चलेगा, वह तत्काल टूट जायगा। उसको एक इंच भी चलने का उपाय नहीं होगा। इसके भी घातक परिणाम हुये और यदि अच्छा आदमी जंगल में चला जाय या संसार छोड़ दे तो दुनिया को बुरा बनाने का साधन बनता है। दुनिया तो चलेगी उसे बुरे लोग चलायेंगे, अच्छे लोग भाग जायेंगे, इसलिये मैं कहता हूं कि अच्छे आदमी के अच्छे होने का एक कर्त्तव्य और हिस्सा यह भी है कि वह उन जगहों पर जहां बुरे आदमी हैं वहाँ से भागे न। सब अच्छे आदमी भाग जायें तो इस संसार को इतने बुरे होने का जिम्मेवार कौन है ? इसका जिम्मेवार बुरा आदमी कम है। इसके जिम्मेवार भागे हुए अच्छे आदमी ज्यादा हैं। इसलिये भी मैं मानता हूं कि सन्यास जो है वह ससार के बीच फलित होना है। उसका फूल यहीं खिलना चाहिए दूकान में, दफ्तर में बाजार में, घर में उसका फूल खिलना चाहिये। इसमें भागने की आवश्यकता नहीं। फिर मेरी समझ है कि जो जीवन इतना शक्तिशाली है वह पलायनवादी नहीं होना चाहिये। यदि हम कहते हैं कि सन्यास बड़ी अद्भुत शक्तिशाली चीज है तो संसार से भयभीत नहीं होना चाहिये क्योंकि भयभीत सिर्फ कमजोर लोग होते हैं। सन्यासी भयभीत है पूरे वक्त की वह यदि संसार में खड़ा हो गया तो बिगड़ जायगा। मतलब यह हुआ कि संसार में बिगाड़ने वाली शक्तियाँ ज्यादा प्रबल हैं और अच्छे आदमी की शक्तियाँ Impotent हैं। हम बहुधा कहते हैं कि बुरे आदमी की संगति मत करो, यह बड़े मजे की बात है और कहते हैं कि बुरे आदमी की संगति में तुम बिगड़ जाओगे। लेकिन हम कभी यह नहीं सोचते कि जब एक अच्छा आदमी बुरे आदमी की संगत करता है तो उसमें एक बुरा आदमी भी तो अच्छे आदमी की संगत करता है। लेकिन बिगड़ता हमेशा अच्छा आदमी है। हम कभी यह नहीं कहते कि यह अच्छे आदमी की संगत बुरे आदमी से हो रही है तो बुरा आदमी सुधर जायगा। पर हमेशा यही कहते हैं कि अच्छा आदमी बिगड़ जायगा। जिस दुनिया में अच्छाई कमजोर हो उस दुनिया में अच्छाई बहुत दिन तक नहीं रह सकती है। सिर्फ धोखा हो सकता है। मेरा मानना यह है कि अच्छाई को प्रमाण देना चाहिए कि वह भी प्रबल है। शक्तिशाली है। लेकिन वह प्रमाण कहां दें। जंगल में कोई प्रमाण नहीं और जीवन की सारी प्रमाणिकता सम्बन्धों में है। वह अंर्तसंबंधों Inter-relationship में है। यदि मैं जंगल में बैठ कर ये कहूं कि मैं सच बोलता हूं तो कोई अर्थ नहीं रखता क्योंकि सत्य बोलना सदैव किसी से संबंधित है। मैं अकेले में झूठ बोलता हूं, सच बोलता हूं। यह कोई मतलब नहीं रखता। जब तक कि कोई अन्य व्यक्ति वहां प्रमाण के लिये न हो। और अगर दूसरा भी वहाँ मौजूद हो और मैं सच बोलता हूं लेकिन मेरे किसी स्वार्थ को हानि नहीं पहुंचेगी

क्योंकि मैं सब स्वार्थ को छोड़ कर भाग आया हूं। तब भी सच बोलने का कोई मतलब नहीं, न मेरे पुत्र को हानि पहुंचती हो न मेरा घर नीलाम होता है न मेरी दूकान बंद होती है। अब मेरे पास न पुत्र है न घर है। क्योंकि न मेरे पास दूकान है। अब मेरे पास न पुत्र है न घर है। अब मैं सच बोल सकता हूं। ऐसे तो कोई भी सच बोल सकता है। सच जो बोल रहा है उसमें बाधा यही है कि सच उसके स्वार्थ को हानि पहुंचाता है और सन्यासी है जो सब छोड़कर चला गया जो अब सच बोल सकता है। मेरा अपना मानना ये है कि ऐसे सच का भी कोई मूल्य नहीं और इसकी जरूरत भी नहीं पड़ती, क्योंकि जहां जरूरत थी वह उस अवसर को छोड़कर चला आया है इस प्रक्रिया में सन्यासी कमजोर हुआ है और संसारी बुरा हुआ और सन्यासी कमजोर है। शक्तिशाली संसारी अच्छा, सन्यासी लेकिन शक्तिहीन बुरा, संसारी लेकिन शक्तिशाली इससे जो संयोग पैदा हो रहा है और जो समाज पैदा हुआ वह अच्छा समाज नहीं है। तो पहला कहना मेरा ये है कि जो संसारी है उसे वहीं सन्यासी हो जाना है। उसे कुछ भी छोड़ने की आवश्यकता नहीं सिर्फ उसे अपने में परिवर्तन लाना है। परिवर्तन के लिये दो उपाय हैं। एक तो परिस्थिति को बदल दो या स्थिति को और जो आदमी परिस्थिति बदलने पर जोर देता है, मैं यह मानता हूं कि वह आध्यात्मिक नहीं है। वह भौतिकवादी है। क्योंकि परिस्थितियां सब भौतिक हैं। मैं कहता हूं कि अगर मुझे इस घर के बाहर कर जंगल में रहने को मिल जाय तो मन बड़ा पवित्र रहेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि घर मुझे और मेरे मन को अपवित्र करता है और जंगल मुझे पवित्र करता है। जोर मेरे मकान पर है मन पर नहीं। वह संसारी कहे कि जब मेरे पास लाख रुपये न हों तब तक मुझे अशांति रहती है और अगर दस लाख हो जायें तो शांति होती है। मतलब यह कि भौतिक परिस्थिति में फर्क हो जाय तो मेरा मन बड़ा शांत हो जायगा। वह भी परिस्थिति को बदलने की बात कर रहा है। उसका कहना है कि छोटे पद पर हूं तो तकलीफ और बड़े पद पर आ जाऊंगा तो सब ठीक हो जायगा। संसारी की भाषा भी सोचने की है और सन्यासी की भी, तो फर्क कहाँ है। फर्क यहाँ होना चाहिये कि संसारी उस दिन फर्क शुरू करता है जिसे वह कहता है कि मैं अब परिस्थितियों की चिन्ता छोड़ता हूं, मैं अपने को बदलता हूं मन की स्थिति को बदलता हूं। परिस्थिति कैसी होगी यह गौण है मैं अपने मन को बदलता हूं मन की स्थिति को बदलता हूं और मन की स्थिति को बदलता हो तो प्रतिकूल परिस्थिति में बदलने में राज एवं रहस्य है। क्योंकि वहाँ संघर्ष है, चुनौती है। अगर एक आदमी बाजार में ईमानदार होने की धारणा करता है, ईमानदारी बड़ी बलवान पैदा होगी, पैदा होने में कठिनाई होगी। संकल्प बड़ा श्रम लेगा। उस आदमी को बड़ी तकलीफें झेलना पड़ेंगी। लेकिन धर्म सस्ता नहीं है उसके लिये बड़ा मूल्य चुकाना पड़ेगा और जिसको हम सन्यासी कह रहे हैं वह सस्ते धर्म में जी रहा है, वह मूल्य चुका नहीं सकता और जब मूल्य चुकाना पड़ता है वहां चुनौती है। वह भाग गया है। एक तो, मैं सन्यासी को खड़ा करना चाहता हूं, इसी संसार में, इसका और भी कारण है। मेरे देखने में ये बातें निरन्तर साफ होती गई हैं।

अब दुनियां में ऐसा सन्यासी नहीं टिक सकेगा जो प्रोडेक्टिव नहीं है, उत्पादक नहीं है। तो रूस में सन्यासी समाप्त हो गया क्योंकि उसने निर्णय कर लिया कि जो पैदा करेगा वह खायेगा। बीस करोड़ का देश है वहाँ सैकड़ों हजारों सन्यासी थे ईसाई फकीर थे वे सब खत्म हो गये हैं। चीन में बौद्ध, ईसाई, मुसलमान फकीर सब खत्म हो रहे हैं। वे अब नहीं बच सकते हैं। जहाँ २ समाजवादी चिंतन बढ़ेगा और जहाँ २ ये विचार आयेगा कि जो आदमी पैदा नहीं करता वह खाने का हकदार नहीं है, वहां सन्यासी दुश्मन मालूम होंगे, आज भी आधे जगत में सन्यासी खत्म हो गये बाकी आधे जगत में अधिक दिन नहीं चल सकते हैं, क्योंकि जिसको हम सन्यासी कहते थे अब उसको चीन में रूस में विदा कर रहे हैं क्योंकि वह कुछ करता नहीं। हम कहते हैं कि वह भजन कीर्तन करता है तो उसका अपना स्वार्थ है। उसके लिये दूसरे क्यों मेहनत करें।

थाइलैंड जैसे देश में ४ करोड़ आबादी है और २० लाख सन्यासी हैं। ४ करोड़ में २० लाख सन्यासी हैं यह शोचनीय है। अब थाईलैंड इन्कार करेगा, बल्कि इन्कार कर रहे हैं। थाईलैंड की असेम्बली में यह प्रश्न था कि अब कोई भी सन्यासी होना चाहेगा वह पहले जब तक सरकार से आज्ञा न ले तब तक उसे सन्यासी नहीं होने देना चाहिये। क्योंकि अब इन सन्यासियों को कौन पालेगा, ये क्या खायेंगे, क्या पियेंगे, कैसे जियेंगे। इस देश में आने वाले २० साल में वह सवाल उठेगा, ज्यादा समय नहीं है। मैं मानता हूं कि सन्यास इतनी अद्‌भुत चीज है वह नष्ट नहीं होनी चाहिये। अब उसको बचाने का एक ही उपाय है। हम Non-Productive दुनिया से Productive दुनिया में लायें, उसे अनुत्पादक से उत्पादक बनावें और मेरी दृष्टि से सन्सारी पर निर्भर न हों, वह स्वावलम्बी हो और उत्पादक हो तब ही उसका भविष्य है, अन्यथा कोई भविष्य नहीं।

तीसरी बात की यदि हम उसे स्वीकार करते हैं जैसा कि अभी स्वीकार रहा, सन्यास जिन लोगों ने लिया है, उनको आनन्द मिला, संदिग्ध है। लेकिन जिनको छोड़कर वे भाग गये उनको दुःख मिला ये असंदिग्ध है। अगर हम हिसाब लगायें हम हिसाब कभीलगाते नहीं। यदि हम हिसाब लगायें और सिर्फ भारत ही का हिसाब लगायें तो पता लगेगा कि करोड़ों परिवारों ने इन संन्यासियों की वजह से दुःख झेला है जितना की डाकुओं के वजह से नहीं झेला। जितना दुख चोरों की वजह से नहीं झेला उतना बड़े-बड़े हत्यारों ने नुकसान नहीं पहुंचाया उतना सन्यासियों ने पहुंचा दिया, लेकिन यह धार्मिक तरह का दुख है। और देने वालों को हम कभी कहते नहीं कि तुम दुख दे रहे हो। यदि महावीर के समय में ५० हजार सन्यासी थे वे ५० हजार परिवारों को छोड़ के आये हुये लोग ही नहीं, बल्कि उनके बच्चे भी हैं, इनकी पत्नियां भी हैं तथा किसी के बूढ़े मां एवं बाप भी हैं। वे सब के सब आज विदा हो गये उनने भी झेला इसको, क्योंकि हमारी यह मान्यता है कि यह इतना महान-कार्य है इसलिये हम कष्ट झेलें। आनन्द की बात यह है कि जो छोड़ कर आया है, उसे भी आनन्द मिला की नहीं ये पक्का नहीं होता। किन्तु जिन्हें वह छोड़ कर आया है उन्हें वह भारी दुख पहुंचाता है। और ऐसा सन्यास जिससे कहीं भी दुःख पैदा होता है या किसी भी कारण से दुःख पैदा होता हो मैं नहीं मानता कि वह धार्मिक है। वास्तव में धर्म का मतलब यह है कि जिसके कारण किसी को भी दुःख न हो। न्यूनतम दुःख की सम्भावना पैदा हो। अब ऐसा सन्यासी कहता हो कि मैं अहिंसक हूं तो मैं नहीं मानूंगा क्योंकि हिंसा बड़ी गहरी है। अगर कोई छोटे-छोटे बच्चों को छोड़ कर आया है और साथ ही पत्नि को छोड़ कर आया है उनके साथ जो हिंसा हुई है यह जिम्मेदारी उसकी है। मैं ऐसे सन्यास के भी खिलाफ हूं, जिससे हिंसा और दुख पैदा होता है।

मेरी पहली धारणा यह है कि जो सन्यास अभी प्रारम्भ किया है उसमें पहली बात तो यह है कि जो जहाँ है वहीं घोषणा करे, वह कपड़े भी बदले और नाम भी बदले,बदलने से उसकी पूरी व्यवस्था में प्रथकता पैदा हो जाती है। एक नाम बदलने से उसका पुराना तादात्म्य था उसके व्यक्तित्व से वह टूट जायगा। कपड़े बदलने से उसे २४ घन्टे याद रहता है और दूसरे भी उसे २४ घंटे याद दिलायेंगे कि वह सन्यासी है। यह स्मरण प्राथमिक रूप से बड़ा फायदे का है। नहीं तो वह भूल ही जाता है। लोग हमें यहां आकर कहते हैं कि हम तो अन्दर से ठीक हैं। लेकिन अन्दर का स्मरण नहीं रह पाता है। और जो कपड़े बदलने में डर रहा है वह अपने को बदल पायगा? इतनी हिम्मत कर पायगा, इसकी सम्भावना बहुत कम है। नाम बदल देना ताकि २४ घंटे उसे स्मरण रहे। उसे कपड़े बदल देने हैं, यह उसके ससंकल्प की घोषणा भी है। समाज के प्रति वह कहेगा कि मैं रहता तो यहीं हूं लेकिन अब अपने जीवन को परमात्मा को समर्पित किया। काम जो करता था वही करूँगा क्योंकि मैं किसी को दुःख नहीं देना चाहता हूं। लेकिन अब काम करने की मेरी निजी आकांक्षा थी वह बिदा हो गई। अब काम इसलिये कर रहा हूं कि उस काम के न करने से किसी को कोई दुःख न पैदा हो। नौकरी कर रहे हैं तो नौकरी

करेंगे लेकिन नौकरी का मूलआधार बदलना है। अब इस नौकरी का मूल आधार यह नहीं रहा न मेरी महत्वाकांक्षा और मेरे अहंकार का कोई हिस्सा है। अब इसका मूल आधार इतना रहा है कि इस नौकरी से किसी की जावन व्यवस्था को दुःख का कारण न बने अब कारण बिलकुल बदल गया है और जैसे जैसे यह समझ बढ़ेगी वैसे वैसे लगेगा कि काम जो मैं कर रहा हूं वह परमात्मा का काम है । अब मैं अपने बेटे को पाल रहा हूं वह भाव छोड़ देना पड़ेगा। अब मैं परमात्मा के बेटे को पाल रहा हूं । अब मैं एक Instrument एक साधन हूं तो इस सन्यास में साधन मात्र होने की धारणा सबसे गहरी होगी, वह मेरा काम नहीं है, लेकिन मैं जिस स्थिति में हूं, उस स्थिति में वह काम अनिवार्य है इससे बहुत फर्क पड़ेगा । जब तुम खुद कर रहे हो उस काम को तब और अब साधन मात्र हो तब बहुत फर्क पड़ जायेगा। जैसे ही तुमने समझा है कि तुम साधन मात्र हो वैसे ही साक्षी होना सम्भव हो जायगा। तुम अपने काम में साक्षी रह सकोगे और जैसे ही समझा कि तुम साक्षी हो तो उस काम में होने वाली चोरी बेईमानी तुम्हें आकर्षित नहीं करेगी क्योंकि अब तुम मालिक नहीं हो। उस काम में तुम केवल मालिक नहीं हो अब, तुमने जगत व्यवस्था को छोड़ दिया है। अब तुम उसके बीच के केन्द्र नहीं हो, ये धारणा जैसे गहरी होगी और साथ में उसमें ध्यान का प्रयोग चलेगा जो कि सन्यासी की मूल साधना होगी। यह सन्यास लेने का मतलब ही यह है कि ध्यान में गहराई बड़ी हो, ध्यान जारी हो और ध्यान से ही तुम्हारा सन्यास आना चाहिये कि तुम्हें लगे कि मैं अब इस जगह आ गया हूं कि जहाँ मैं साधन मात्र हो गया हूं तो ये ध्यान जितना बढ़ेगा, साधन का भाव जितना बढ़ेगा, साक्षी भाव जितना बढ़ेगा, उतना काम इस जगत में अभिनय की तरह जो कि करोगे, करोगे काम, उठोगे आओगे, जाओगे, न ही कहीं दौड़ोगे, न किसी को दुःख पहुंचाओगे, न ही तुम्हारी वजह से कहीं किसी को पीड़ा होगी। लेकिन लगेगा कि तुम्हें जैसे सारा संसार एक बड़ा स्वप्न हो गया और स्वप्न हो गया और स्वप्न में एक अभिनय मात्र रह गये हो। इसके गहरे परिणाम होंगे, रोज परिस्थितियाँ आवेंगी जो प्रतिकूल होंगी । रोज परिस्थितियों में तुम्हें अपने संकल्प को, अपने संघर्ष को, प्रगाढ़ और प्रखर करना होगा, उससे तुम्हारा बल बढ़ेगा, आत्मा पैदा होगी, तो एक तो सन्यास का यह रूप है। संन्यास को मैं तीन हिस्सों में विभाजित किया हूं। संसारियों को, यह काम चलाऊ विभाजन है। सन्यास की मूल धारणा तो यही होगी ही जो मैंने कही। ये हां कुछ लोग ऐसे होंगे जिन पर वास्तव में कोई जिम्मेवारी नहीं है । अवकाश प्राप्त लोगों के पास अब कोई काम भी नहीं अब उनके पास कोई दूकान भी नहीं, अब इन पर कोई ऐसी जिम्मेदारी भी नहीं जिसके कारण इनके लिए यहीं खड़ा होना आवश्यक है। बल्कि यहाँ से हट जायें ये इनके लिए हितकर होगा, क्योंकि कई मौके ऐसे हैं जैसे एक बूढ़ा आदमी है, अगर वह हट जाय तो घर के लिये भी सुविधापूर्ण होगा और उसके लिए भी सुविधापूर्ण होगा। कई क्षण ऐसे आ जाते हैं, जब कि हम व्यर्थ ही वहाँ होते हैं, वहाँ हमारा होना कष्ट देता है । वहाँ से चुपचाप उसे हट जाना चाहिये । जब तक हमारे होने से वहाँ सुख हो रहा है, तब तक हम साधन मात्र रहे। जिस दिन हमें ऐसा लगे कि हमारे होने का अर्थ नहीं एक समय आ जाता है कि एक ७० वर्ष का बूढ़ा आदमी अब घर में सारे लोग अपने काम में लग गये हैं अब वह ६०-७० साल के बूढ़े आदमी में और ३० साल के लड़के में कोई मेल भी नहीं बैठता, बुद्धि का भी विचार का भी, सोच का, समझ का भी उनकी मात्रा ही मेल नहीं खाती। अब इन दोनों के बीच अकारण उपद्रव होता है। इसमें कोई अर्थ नहीं। इसमें कोई प्रेम फलित नहीं होगा। ऐसे व्यक्तियों को जिन पर कोई जिम्मेवारी नहीं। ऐसे युवक भी हो सकते हैं जिनके ऊपर कोई जिम्मेवारी नहीं। ऐसे व्यक्तियों के लिए आश्रम बनाना चाहता हूं। लेकिन वह आश्रम भी Productive होंगे वह भी Unproductive नहीं होंगे। उन आश्रमों की अपनी खेती होगी, अपना बगीचा होगा। अपना छोटा उद्योग होगा। कुछ भी हो पैदा करेंगे याने

वह किसी पर निर्भर नहीं होंगे तब वहाँ भी भागना नहीं होगा। वह भी दुनिया का एक हिस्सा होने वाला है, और वहाँ सामूहिक जीवन होगा। जो भी वहाँ पैदा होगा, उसके लिए सन्यासियों को कम से कम ३ घंटे काम करना होगा। वह जो काम कर सके। यदि वृद्ध है और पढ़ा सकता है तो तीन घंटे पढ़ा दे। जो जिस प्रकार का काम कर सकता है, वह तीन घंटे का काम करे। बाकी समय का उपयोग अध्ययन, उनकी साधना, भजन-चिन्तन में होगा। तीन घंटे काम करने में जो Community है उससे सन्यासियों को किसी पर निर्भर न होना होगा। वे अपने लिए पैदा कर लेंगे। इस सामूहिक जीवन में कोई न ऊंचा होगा और न कोई नीचा। अगर इसका अस्पताल होगा तो वहाँ डॉक्टर नर्स और चपरासी में कोई अंतर नहीं होगा। उनको खान पान एकसा मिलेगा। रहन सहन एकसा होगा। कपड़े एवं अन्य सुविधाएँ एकसी होंगी। उनके पद प्रतिष्ठा में कोई अन्तर नहीं होगा। सिर्फ उनके काम में फर्क पड़ेगा। फर्क ऐसा होगा कि यदि कोई डाक्टर है तो वह अपना डाक्टरी काम करेगा। चपरासी अपना काम करेगा। लेकिन आश्रम में चपरासी छोटा नहीं होगा, और न डाक्टर बड़ा होगा। इसलिये इस Community में आध्यात्मिक साम्यवाद का प्रयोग होगा क्योंकि मेरा मानना यह है कि जब तक दुनिया को आध्यात्मिक साम्यवाद के प्रयोग नहीं मिलते हैं तब तक साम्यवाद से बचा नहीं जा सकता है। अब यह बड़े मजे की बात है कि भौतिकवाद ने तो दुनिया को साम्यवाद जैसी धारणा दे दी और अध्यात्म अभी तक साम्यवाद की धारणा नहीं दे सका तो Materialism ने तो दिखा दिया कि हम सारी दुनिया को एक करके दिखाये देते हैं। बिना किसी भेद के कि सारे लोग बराबर हों और फिर भी काम तो जिसको जो करना है वह करता है। बुहारी लगाने वाला बुहारी लगाता है। प्राचार्य का काम करने वाला प्रिंसपल का काम करता है। एक Common स्कूल होगा। कालेज होगा इन्डस्ट्री होगी और एक छोटा नगर होगा। यह सन्यासियों का नगर होगा। सन्यासियों के इस नगर को हम सन्यास, ध्यान की साधना के प्रचार का केन्द्र बना देंगे, जो घरों में सन्यास लिए लोग हैं वो भी वर्ष में महिने दो महिने के लिये इस Commune में आकर रहेंगे। यहाँ से साधना की गहराई लेकर वापस लौट जायेंगे, यह दूसरे प्रकार का सन्यास होगा।

तीसरे प्रकार का सन्यास जो लोग इतना भी नहीं जुटा पाते कि घर में कपड़े बदल लेना और बदल जाना, समझ को भी जुटा नहीं पाते, इतना साहस भी नहीं और एकदम से सन्यासी हो जायें तो मैंने उनके लिये सामयिक सन्यासी की कल्पना की है कि वे साहस न जुटा सकें तो जल्दी नहीं है। वह Commune में आ जाये और महीने भर के लिये सन्यासी हो जाय। जैसे जिन्दगी चलती थी वैसी चलाये। न कपड़े बदले न नाम बदले। लेकिन इस महिने भर की साधना और Commune में रहना और ये अनुभव उसके भीतर प्रवेश कर जायेगा। अभी हिम्मत नहीं जुटाते हैं। साल भर बाद दो बार Commune में आने के बाद महीने भर में वह हिम्मत जुटा लेंगे। साहस उनमें आ जायगा तो इनके लिये सामयिक सन्यास की व्यवस्था करनी होगी कि वे कभी आकर सन्यास ले लें। पर जितने दिन के लिये वे सन्यास लेंगे इस बीच वे सन्यासी की तरह रहेंगे फिर लौटकर अपने घर में चुपचाप सम्मिलित हो जायेंगे ऐसी कुछ व्यवस्था बर्मा में है जहाँ कोई भी आदमी सन्यास ले सकता है कुछ महीने के लिये। बर्मा में ऐसा आदमी मुश्किल से मिलेगा जिसने जिन्दगी में एक-दो बार सन्यास न लिया हो। बर्मा के अनुभव की गहराई बढ़ी है। हर आदमी को सन्यास का रस। फिर तीनों तरह के सन्यास को मैं आजीवन सन्यास नहीं कहता मैं कहता हूं कि यह अपने निर्णय की बात है। कल किसी को लगता है कि नहीं हमें वापस लौट जाना है, अपनी पुरानी व्यवस्था में, उसे मना करेंगे नहीं, न उसकी निंदा करेंगे अपनी मौज से आया था अपनी मौज से लौट जायेगा। नहीं तो सन्यास पाखंड हो जाता है। सन्यास में अभी हमारे प्रवेश द्वार हैं लेकिन निकलने का द्वार नहीं है। एक बार आदमी सन्यासी हो तो हम उसे निकलने नहीं देते फिर

हम इतना अपमान, इतनी निंदा करते हैं, भागे हुए सन्यासी की, निकले हुये की कि उसकी जिन्दगी हम मुश्किल में डाल देते हैं। इसके फिर दो ही रास्ते रह जाते हैं कल उसे सन्यास आनन्दपूर्ण न मालूम पड़े तो फिर वह पाखण्डी हो जाता है। ऊपर से वह सन्यासी बना रहता है और पीछे से उसे जो कहना है शुरू कर देता है। इसलिए सारा सन्यास हिपोक्रेसी हो गया। उसमें सब पाखण्ड चले। धन की निंदा करता रहेगा लेकिन धन इकट्ठा करता रहेगा। वही काम करेगा जिसकी वह निंदा करेगा। तो मेरा मानना यह है कि जिस दिन किसी को लगे कि नहीं भाई हमारी बात इसमें हमें कुछ रस नहीं आया, तो स्वतन्त्रता है तुम्हारी तुम वापस चले जाओ और हम निंदा नहीं करते। इसलिये पाखण्डी होने की कोई जरूरत नहीं है। जितने स्वागत से सन्यास देंगे उतने स्वागत से विदा कर देंगे। और कल तुम महीने बाद आओगे तो फिर वापस ले लेंगे। इसको हम व्यक्तिगत निर्णय बनाते हैं। हम सामूहिक प्रतिज्ञा नहीं बनाते। यह तुम्हारा संकल्प है। तुमने लिया तुम छोड़ोगे, तुम फिर लेना चाहोगे तुम जिम्मेदार हो और किसी के प्रति कोई जिम्मेदारी नहीं। इसमें दो तीन बातें और नई जोड़ी हैं। पहली मेरी दृष्टि में सदा से है कि सन्यासी किसी धर्म में बंधा हुआ नहीं होना चाहिये। नहीं तो वह सन्यासी ही क्या। तो चाहे वह हिन्दू हो चाहे मुसलमान हो, या जैन, या बौद्ध हो जैसे ही वह सन्यासी होता है वह सारी मनुष्यता का हो जाता है। और सब धर्म उसके अपने होते हैं और वह किसी विशेष धर्म का नहीं रह जाता है। फिर भी उसे मौज है उसे कुरान पढ़ना पसंद है, उसे मस्जिद में जाकर नमाज पढ़नी है तो पढ़ता रहे। उसे बुद्ध से प्रेम है तो वह जारी रखे। किन्तु किसी समुदाय का सदस्य न रहे। यह उसकी व्यक्तिगत आनन्द की बात है। स्वाभाविक है किसी को कुरान पसंद पड़तो है और किसी को गीता। किन्तु गीता पढ़ने वाला सन्यासी अपने को हिन्दू नहीं कहेगा। मुझे गीता से प्रेम है। यह सन्यासी कुरान पढ़ने वाला मुसलमान नहीं कहेगा। अपने से सन्यासी होते ही बाहर हो जायगा, तो दुनिया में एक ऐसा सन्यासी चाहिये जो किसी समुदाय का न हो तब हम दुनिया को ऐसी धार्मिकता दे सकेंगे जो गैर साम्प्रदायिक हो, नहीं तो नहीं दे सकेंगे यह असम्भव है देना। दूसरी बात यह जो सन्यासी इन तीन हिस्सों में बंटे हुये होंगे, ये तीनों हिस्से भी कोई एयर टाइट कम्पार्टमेंट नहीं हैं। इसमें से एक दूसरे में यात्रा हो सकती है, जिस आदमी ने पीरियडीकल किया है, हो सकता है कल वह कहे कि इसको मैं लम्बाना चाहता हूं तो लम्बा कर सकता है, जो आदमी हाल में सन्यासी हुआ कल स्थितियां बदल जायें और वह कहे कि अब मेरा घर में रहना बिलकुल अनावश्यक है कहीं कोई तकलीफ होती नहीं उसमें, तो वह आश्रम में जा सकता है। एक सन्यासी आश्रम में रह रहा है युवक ही है, कल उस पर कोई जिम्मेवारी नहीं थी आज उसका किसी से प्रेम हो जाये और विवाह करना चाहे, तो वह गृहस्थ हो सकता है इनको हम कहीं भी टाइट नहीं करते हैं, इनके बीच एक प्रवाह होगा चूंकि हम इसको व्यक्तिगत निर्णय मानते हैं इसलिए समूह को इस संबंध में कोई चिन्तन की कोई जरूरत नहीं है। तीसरी बात यह जो सारे सन्यासी हैं इनके पास इनके विवेक के अतिरिक्त कोई नियम मैं नहीं दूंगा। इनका विवेक जगे इस तरह ध्यान की प्रक्रिया करें और अपने विवेक से जियें, इनके ऊपर से थोपे हुए नियम नहीं होंगे। क्योंकि जब भी हम ऊपर से नियम थोपते हैं व्यक्ति के नियम के विवेक जगने में भी बाधा पड़ती है। और व्यक्ति को धोखा देने से कारण बनते हैं। तो नहीं कहेंगे कि पाँच बजे सुबह उठना अनिवार्य है। हां हम इतना जरूर कहेंगे कि यदि ध्यान गहरा होता चला जाता है तो नींद का समय कम होता चला जायेगा क्योंकि नींद गहरी हो जायेगी। पर फिर भी हम नहीं कहेंगे कि सब ५ बजे ही उठें, कि सब ३ बजे ही उठें। इस तरह की जोर जबरदस्ती हम नहीं थोपेंगे। वरना नियम जो है वह कारागृह बन जायेगा। यह प्रत्येक की मौज एवं विवेक पर निर्भर होना चाहिए। और सच बात भी यह है कि हर आदमी के उठने का वक्त अलग अलग ही होगा क्योंकि सब आदमियों की नींद की गहराई का वक्त अलग अलग है। कोई आदमी दो और चार और ६ बजे के बीच में गहरी नींद लेता है। जिस आदमी ने

२ और ४ के बीच में गहरी नींद ली तो ४ बजे वह उठजाये तो उसको दिन में तकलीफ नहीं होगी। और उसको जिसकी नींद ४ और ६ बजे के बीच में गहरी होती है तो दिन में परेशान रहेगा इसलिए प्रत्येक को तय करने की बात है कि विवेक कैसे जगे यह चिंता की बात होगी। ध्यान कैसे गहरा हो वह चिंता की बात है बाकी छोटी छोटी जिंदगी की मर्यादाएँ प्रत्येक अपनी सोचेगा। चौथी बात इसमें कोई गुरु नहीं होगा क्योंकि जहां गुरु होगा वहां अनिवार्य रूप से सम्प्रदाय खड़े हो जाते हैं। सब सम्प्रदाय गुरुओं के आसपास खड़े होते जाते हैं बिना गुरु के सम्प्रदाय खड़ा नहीं हो सकता है चाहे वह मोहम्मद के पास खड़ा हो, महावीर के पास खड़ा हो और चाहे राम के पास खड़ा हो। जहां भी सम्प्रदाय खड़ा होगा वहां एक गुरु होगा। स्वभावतः पूछा जा सकता है कि मैंने दिया है सन्यास तो मैं गुरु नहीं हो जाता। मैंने एक और नई बात जोड़ी है इसमें वह यह है कि मैं सिर्फ एक साक्षी हूं, तुम्हारे सन्यास का गवाही हूं, पर मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूं। इसलिए तुम भी किसी के सन्यास के साक्षी हो। लेकिन गुरु नहीं दूसरे के होंगे। Commune में अगर सौ सन्यासी रहते है और एक नया सन्यासी आता है तो वह सब साक्षी बनेंगे उसके। वह सन्यास लेगा सौ सन्यासी उसके गवाह होंगे। गवाही से ज्यादा कोई आदमी नहीं होगा। कोई गुरु नहीं, इसलिए मैं सन्यास देने वाला नहीं हूं तुमने सन्यास लिया इसका गवाह हूं और किसी व्यक्ति विशेष पर इसे केन्द्रित नहीं करना है। अगर ये तीन वर्गों में और ३ वर्गों में बड़े लोग उत्सुक हैं और इतने बड़े पैमाने पर यह सन्यास फैल सकता है। क्योंकि इसमें सबकी सुविधा है और सब तरह के लोगों के लिए व्यवस्था है मैं तो आशा करता हूं कि दो साल में पूरे देश में हर गाँव में सन्यास को खड़ा कर सकेंगे और ये सन्यास वहाँ धर्म के लिए एक केन्द्र बन जायेगा जो वहाँ काम करेगा। वह न हिन्दु होगा, न मुसलमान, न ईसाई, वह मस्जिद में भी जावेगा, मन्दिर में भी जायेगा, मुसलमान को भी ध्यान सिखायेगा, हिन्दु को भी सिखायेगा उससे जिसके लिए बन पड़ेगा करेगा, और इस तरह के छोटे छोटे आश्रम भी जगह जगह खड़े करने हैं, जहाँ ये कम्यून बन जायें। मेरे देखने में और भौतिकवाद से अगर कोई भी लड़ाई ले लेनी हो तो भौतिकवाद से ज्यादा श्रेष्ठ विकल्प देना होगा तब लड़ाई होगी। नहीं तो मजा तो यह है कि लड़ाई तो हम लेना चाहते हैं लेकिन हमारे पास श्रेष्ठ विकल्प नहीं होता है इसलिए सारी दुनिया को कम्युनिज़्म हड़प ही जायेगा उससे बचना मुश्किल है क्योंकि वह गरीब को रोटी देता है, नंगे को कपड़ा देता है, अशिक्षित को शिक्षा देगा। नहीं है जिसके पास मकान उसको मकान देगा। अध्यात्म के पास ऐसा देने को कुछ भी नहीं है। वह सिर्फ ईश्वर की बातचीत दे सकता है उससे लोग ऊब गये हैं। हमें ऐसे कम्यून चाहिए जो हमारे हों वह आदर्श बन जायेंगे। क्योंकि उस तरह की व्यवस्थाएँ और भी फैल जायेंगी। और धीरे धीरे कोई वजह नहीं की पूरा गाँव कम्यून क्यों न हो जाये, लेकिन उसके आधार आध्यात्मिक होंगे। इससे आमूल सन्यास की पूरी धारणा में फर्क हो जायेगा और क्रांति हो जायेगी।

प्रश्न—उस आश्रम में क्या विवाहित पुरुष भी रह सकेगा?

उत्तर—हां उस आश्रम में विवाहित व्यक्ति भी रह सकेगा, क्योंकि मैंने कहा न कि मैं कोई नियम थोपता नहीं हूं, यह सब उसके ऊपर निर्भर है। हम उससे कहने वाले भी नहीं कि तुम यह क्या कर रहे हो? यह सब उसकी चेतना पर ही निर्भर है, बस यह सब उसीका निर्णय है।

क्योंकि मैं यह मानता हूं कि अगर तुम डगमगाते हो तो तुम गिरोगे। इससे दूसरे को चिंता क्यों? तुम गलती करते हो तो तुम दुःख भोगोगे। इसके लिए मैं और दूसरे क्यों चिंतित हों। हम कितनी मुसीबत उठा रहे हैं इन सबके पीछे कि कोई डगमगा न जाय इसके लिये दूसरे परेशान हैं। वह डगमगायेगा तो अपने डगमगाने का जो दुःख है वह झेलेगा, इसमें किसी को परेशान होने की आवश्यकता नहीं, वह नहीं डगमगाता तो हम उसको आदर देने वाले नहीं। इसलिये मेरी

दृष्टि में यह है कि व्यक्ति के ऊपर जो समाज की बहुत ज्यादा आंख रहती है उसको हटाना है यह एकदम गलत है, किसी को हक्क नहीं है किसी पर इतने जोर से आंख गड़ाये, नहीं तो व्यक्ति की हत्या होगी। तुम्हारे पान और सिगरेट से भी सारा समाज चिंतित है, इससे कोई लेना देना नहीं किसी को, यदि तुम सिगरेट पीते हो तो इससे उम्र कम होगी तो तुम्हारी होगी। इसमें दूसरों को क्यों चिन्ता है ? मैं मानता हूं समाज को उस समय तक बीच में नहीं आना चाहिए, जब तक कि कोई व्यक्ति किसी दूसरे को नुकसान पहुंचाने लगा हो, हमारे आश्रम में सिर्फ इतनी फिकर होगी कि तुम अपने को अगर नुकसान पहुंचाते हो तो पहुंचा सकते हो लेकिन दूसरे को तुम्हें नुकसान पहुंचाने का कोई हक नहीं याने तुम सिगरेट पीते हो तो हमें कोई फिकर नहीं उसका तुम्हें दुख मिलने वाला है तुम फ्रस्ट्रेट होने वाले हो, लेकिन तुम दूसरे के मुंह में सिगरेट लगाने जाओ गल्ती शुरू होती है उसके पहले कोई गल्ती नहीं और मेरा मानना यह है कि जैसे ध्यान गहरा होता है तो जो हमारी नासमझीयां हैं वह अपने से गिरनी चाहिये, अगर उसको ही गिरना पड़े तो इसका मतलब यह है कि ध्यान में गहराई नहीं बढ़ रही है। अब एक आदमी ध्यान करते हुए सिगरेट नहीं पी सकता क्योंकि सिगरेट पीने के लिये चित्त की बेचैनी जरूरी है। असल में बेचैन चित्त ही पीता है और बेचैन चित्त धुआं को बाहर भीतर कर अपनी बेचैनी को निकालने का उपाय खोज लेता है। इसलिये मैं नहीं कहता हूं कि शांत आदमी सिगरेट नहीं पियेगा, मैं कहता हूं कि वह पी नहीं सकता उसके पीने की बात ही गल्त है और अगर पी रहा है तो हमें मानना चाहिए कि वह शांत नहीं है। उसको शांत होने की दिशा देनी चाहिए बजाय इसके कि हम उसकी सिगरेट छीनें। एक Positive दृष्टि वहां होगी कि अगर एक आदमी सिगरेट पीता है तो हम समझेंगे कि वह आदमी ध्यान में गहरा नहीं जा रहा है। नहीं तो यह बेचैनी खत्म हो जानी थी। अगर एक सन्यासी सिनेमा देखने जाता है तो मतलब यह है कि चित अपने को भुलाने में लगा है, उसके ध्यान की गहराई नहीं बढ़ रही है। हमें ध्यान की फिकर जरूर करनी है। उसके लिये ध्यान बढ़ाने का Commune फिकर करे। लेकिन हम उसकी फिकर नहीं करेंगे पर हां इसको तो हम लक्षण मानेंगे तब ध्यान की गहराई बढ़ जायगी तो ये लक्षण गिर जायेगे। अगर एक आदमी मांस खा रहा है और मांसाहारी है तो उसका कुल मतलब इतना है कि अभी उसके ध्यान में वैसी निर्मलता नहीं आयी है कि इतनी भी पीड़ा देना किसी को कष्ट पूर्ण हो जाय। इसलिये हम न कहेंगे कि तुम मांस मत खाओ क्योंकि यह हो सकता है कि वह मांस खाना बन्द कर दे लेकिन उसका चित्त न बदले क्योंकि जो नहीं खा रहे हैं वे कोमल निर्मल हो गये हैं ऐसा नहीं दिखाई पड़ता। किन्तु कई बार ऐसा दिखाई पड़ता है कि मांसाहारी से गैर मांसाहारी अधिक कठोर है क्योंकि मांसाहारी का मांस वगैरह खाने में बहुत सा क्रोध और बहुत सा दुख देने का भाव निकल जाता है और उनका नहीं निकल पाता। वह आदमी की चोटी को बचा देते हैं उधर आदमी की गर्दन पकड़ लेते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि शिकारी अच्छे आदमी होते हैं। अगर शिकारी के साथ रहने का मौका मिले तो बहुत बढ़िया आदमी इतना मिलनसार आदमी मिलना मुश्किल है। और इसका कुल इतना कारण होता है कि उसकी हिन्सा तो जंगल में निकल गई होती है, चित्त वहाँ खाली हो गया होता है।

इसलिये जिनको हम आम तौर पर साधु कहते हैं वे बढ़िया आदमी नहीं होते। उनका कुछ भी नहीं निकल पाता सब भरा रहता है। वे तरकीब से निकालते रहते हैं इसलिये मेरा किसी पर जोर नहीं है, जोर भीतरी परिवर्तन पर है। ऊपरी तो बहुत साधारण जोर है नाम बदल डालो। तुम्हारी पुरानी Individualityबदल जायगी, तुम्हें खुद ही वह रोज-रोज ख्याल रहने लगेगा कि तुम अब वह नहीं हो जो कल तक थे। और कपड़े बदल डालो ताकि तुम्हें स्मरण रहे पूरे समय, यह प्राथमिक रूप से सही होगा बाद में कोई मूल्य नहीं। तुम्हें स्मरण रहने लगे कि तुमने जिन्दगी में एक क्रांति का निर्णय किया है और वह क्रांति तुम्हें पूरी करनी है। बाकी ऊपर से कुछ और नहीं थोपना है। अभी २० लोगों ने

निर्णय किया है मनाली में, इसके लिए कम्यून बनाना है, एक बनाया है आजोल में।

प्रश्न—आचार्य श्री, व्यक्तिगत या सामाजिक स्तर पर इसके क्या परिणाम होंगे ?

उत्तर—बहुत परिणाम होंगे। व्यक्तिगत स्तर पर परिणाम शुरू होंगे और धीरे-धीरे सामाजिक स्तर पर तो अशांति विदा होगी, चिंता विदा होगी, वो जो चित्त का पागलपन है वह विदा होगा तुम हल्के हो जाओगे और जीवन में परमात्मा का प्रवेश होना शुरु हो जायगा और तुम इस जगत में सिर्फ खाने पीने, कपड़े पहिनने मकान बनाने को ही बड़ा नहीं समझोगे, बल्कि आत्मा के विकास का भी स्थल बना पाओगे। और जो चीजें तुम्हें कल तक बहुत महत्वपूर्ण थीं वे एकदम गैर महत्वपूर्ण हो जावेंगी और जो कल तक तुमने सोचा ही नहीं था वह बहुत महत्वपूर्ण हो जायगा। व्यक्तिगत जीवन में तो आमूल क्रांति हो जायगी। वह हल्का फुल्का हो जायगा कि वह उड़ सके, उसका भारीपन विदा हो जायगा उसकी गम्भीरता, उदासी चली जायगी। उसका मानसिक रोग असम्भव हो जायगा और ध्यान—जैसे-जैसे गहराई बढ़ती जायगी वैसे-वैसे वह आनन्द से भरता जायगा। जितनी गहराई बढ़ेगी उतना सत्य का अनुभव भी होने लगेगा। समाज पर भी व्यापक परिणाम होंगे। लेकिन वे बाद में होंगे क्योंकि समाज व्यक्तियों के जोड़ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जो भी आज हमें समाज दिखाई पड़ रहा है, वह हमारा कन्ट्रीब्यूशन है। हम जैसे हैं वैसा हमारा समाज है अगर इसमें एक भी व्यक्ति बदल जाय तो उसके आसपास बदलाहट का क्रम शुरू हो जायगा। यदि पति बदलेगा तो उसकी पत्नि वही नहीं रह सकती जो थी, उसको भी बदलना ही पड़ेगा। बच्चे वही नहीं रह सकते जो कल तक थे अगर बाप बदलेगा तो। अगर शिक्षक बदलेगा तो विद्यार्थी वही नहीं रह सकते जो उसके पास दो साल तक रहेंगे उनमें बदलाहट अनिवार्य हो जायगी। एक व्यक्ति एक ही व्यक्ति नहीं है क्योंकि उसके अनेक सम्बन्ध हैं। वह अनेक जगह जुड़ा है, उसकी जहां बदलाहट हुई वह सब जगह जहाँ-जहाँ जुड़ा है वहाँ-वहाँ बदलाहट होगी। अगर हम थोड़े से व्यक्तियों को एक गांव में बदलने को तैयार हो जायें तो पूरे गांव को प्रभावित करेंगे। वह बदलाहट होने वाली है। अभी जिन लोगों ने सन्यास लिया उनमें एक लड़की भी है और एक दफ्तर में क्लर्क है। और उस दफ्तर में भारी हंगामा मच गया, सन्यासी होकर वह पहुंच गई और वह लड़की टाइपिस्ट है। किसी ने अच्छा कहा और किसी ने बुरा कहा। किसी ने मजाक उड़ाई और वह चर्चा का केन्द्र हो गई। उसको कहा था वो होगा और उसे देखना है कि यह सब हो रहा है, एक नाटक हो रहा है, वह देखती रही एक दिन, दो दिन, तीसरे दिन लोगों ने उससे पूछना शुरू किया कि तुम बदल हो गई हो बिलकुल बदल गई हो तुम पर उसका कोई असर नहीं है। उसके मैनेजर ने उसे बुलाया और कहा कि इतनी शीघ्रता से इतनी बदलाहट कैसे हुई क्योंकि उसने सदा ही गंभीर और परेशान देखा और इतने उपद्रव में भी तुम प्रसन्न हो और हँस रही हो। उसने मुझसे आकर कहा (उसने कहा था कि कपड़े बदलने से क्या होगा। बिना कपड़े के मैं मन से ही बदलने की कोशिश करूं।) तीन दिन बादउसने आकर मुझसे कहा कि बिना कपड़े बदले घटना नहीं घटती। सड़क पर निकले तो घर में जाये तो दफ्तर में जाय तो २४ घंटे उसको शांत रहना ही पड़ेगा। कोई न कोई सड़क पर हँसेगा कोई इशारा करेगा कि क्या मामला है। दफ्तर में तो और भी दिक्कत होगी, दफ्तर में लोग भी आयेंगे, काम भी करना पड़ेगा। मैनेजर आज्ञा भी देगा वह सब चुनौती में उस पर फर्क नहीं पड़ा उसके सन्यास में, उसके दफ्तर से दो लोग और आये अभी कोई १५ दिन बाद ही उनने कहा कि हम भी उसमें शामिल होने की हिम्मत कर रहे हैं तो यह समाज में धीरे-धीरे अंतर आते हैं। व्यक्ति हम बदलें तो उसके आसपास फर्क पड़ना शुरू होगा। एक बार तुम्हें ख्याल भी आ जाये तो वह तुम्हारे विचार की बात है। हमारी पूरी जिन्दगी ख्याल है। एक आदमी है उसे तुम कह दो कि लाख रुपये की लाटरी मिल गई है फिर देखो उस आदमी की चाल बदल जायगी, कुछ मिल

नहीं गया उसको लाख रूपया। इसकी चाल बदल गई इसका ढंग बदल गया, उसके आंख की रौनक बदल गई। उसका सब बदल गया, क्योंकि उसके दिल में लाख रुपये की लाटरी का ख्याल आ गया। यह जो तुम्हें ख्याल आ गया कि तुम सन्यासी हो गये हो, तुम्हारा सब बदल जायगा कि तुम कल्पना नहीं कर सकते कि क्या-क्या बदल जायगा। वह ख्याल इतना अद्भुत है कि एक बार तुम्हें ख्याल में आ गया कि तुम सन्यासी हो गये हो तो तुम्हारा बोलना बदल जायगा तुम्हारा देखना बदल जायगा। तुम कल जैसे देखते थे वैसे नहीं देख सकोगे क्योंकि तुम सन्यासी हो। हमें दिखाई नहीं पड़ता ऊपर से वह जब घटना घटती है। जब भी ख्याल में आयगा तो कल तुम जिस आदमी पर नाराज होते थे आज नहीं हो सकोगे। एक आदमी जब मंत्री होता है तब देखो मंत्री होता है तो क्या होता है? और जब मंत्री नहीं रहेगा तब तुम उसको देखो। आदमी वही है लेकिन उसका सब चेहरा गया वह रौनक गई, जो उसके मत्री होने में थी। वह उसके मन में एक ख्याल से निर्मित होता है। न्यूक्लियस जो है हमारे व्यक्तित्व का वह हमारा विचार है जो विचार हमारे भीतर होता है उसके आसपास हमारा व्यक्तित्व निर्मित होता है। हमारा व्यक्तित्व जो ख्याल होता है जब तुम्हें ख्याल होता है कि तुम सफल हो रहे हो तो बात और होती है जब तुम्हें ख्याल होता है कि तुम असफल हो रहे हो तब तुम्हारी हालत और हो जाती है। सन्यास तो एक बहुत अद्भुत घटना है वह ख्याल बैठ गया एक बार मन में गहरे और बैठेगा तब ही तुम बदलोगे। नहीं तो तुम कपड़े भी बदलने को कैसे राजी हो सकते हो। उसकी तुम हिम्मत नहीं जुटा सकते, तुमने हिम्मत जुटाई मतलब कि तुम्हारे भीतर का ख्याल गहराई में आ गया। और जब ख्याल आया तो तुम्हें बदल डालेगा। और महीने भर में पाओगे कि तुम्हारे भीतर सारा व्यक्तित्व ही बदल गया तुम दूसरे ही आदमी हो गये।

प्रश्न—आचार्य श्री, कपड़े का रंग क्या चुना है?

उत्तर—भगवा रंग ही चुना, गैरिक रंग ही चुना है भगवा रंग ही चुना है, और उसका नमूना एकसा ही रखा है। स्त्री पुरुष का, ताकि पुरुष का फासला भी कम हो। एक कमीज लम्बी और नीचे लुंगी। नमूना दोनों के लिए एकसा रखा है। गैरिक रंग को चुना है। ऊपर से यदि सर्दी है तो गरम कपड़ा डाल सकते हो। इससे कोई दिक्कत नहीं।

सिर्फ तुम्हारे खाने का ही खर्च रहेगा, आश्रम में कोई खर्च नहीं। जो अभी पीरियाडिकल होगा उसके लिये अपने खर्च की व्यवस्था करनी पड़ेगी। जो वहां स्थायी रहेगा उसको तो कुछ स्थायी व्यवस्था करना होगा, वह जो आश्रम में ही व्यवस्थित होगा। सारे लोग मिलकर व्यवस्था करेंगे। जो माह भर के लिए जायेगा उसको अपनी व्यवस्था करनी होगी क्योंकि माह भर तो वह साधना ही करेगा। किसी Productive काम में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। एक माह में कुछ भी हो नहीं सकता उससे, तो वह अपना ही करेगा। हमारे पास बगीचे खेत इत्यादि हो जावेंगे, तो वह भी माह भर काम करेगा।

प्रश्न—कपड़ों के विषय में? मैं यदि अपने कपड़े बदल लूं अपने ढग से?

उत्तर—तो मैं मना नहीं करता। तुम जो अभी भी कपड़े पहिने हो मैं क्या कह सकता हूं। तुम कुछ भी पहिन सकते हो। बस बदल लो अपने ख्याल से, उसमें कुछ भी हो। यह तुम्हें ख्याल नहीं रहेगा। जैसे स्त्रियों ने मुझसे कहा कि आप हमें भगवा रंग की साड़ी पहनने को कह दें। तो साड़ी पहनने में कोई दिक्कत नहीं क्योंकि साड़ी पहनी जाती है इसमें कोई याद दिलाने वाला नहीं।

नहीं जैसे अभी पेंट पहन रहे हैं। पेंट के बदले भले ही लुंगी पहन लें। लेकिन लुंगी कोई कठिन मामला नहीं है। सारा दक्षिण लुंगी पहन रहा है। तुम्हें जैसे ही तुम्हारे सन्यासी होने का ख्याल है न, वह तुम्हें न आये तुम्हें दूसरे याद दिलायें तब तक उसका कोई मूल्य नहीं। तो फिर तुम यही पहने रहो कोई फर्क नहीं। जोर

के कारण और है। मैं कह रहा हूं कि कपड़े पहिनने से तुम्हारे तरफ वातावरण 'मोल्ड' हो जायेगा तो तुम फर्क देखोगे। तुम साधारण सफेद लुंगी लगा लो ठीक। गेरुआ कपड़ा पहनकर तुम निकल न सकोगे एक जगह से जहां तुम बिना पूछे रह जाओ। वह सन्यासी की एक धारणा पैदा होती है और यूनीफार्मेटी चाहता हूं इसलिए की तुम्हारे Commune बनाना है। अब समझें कि आजोल आश्रम बनाया गया २०० लोग २०० ढंग के कपड़े पहनेंगे एक तरह का वातावरण होगा यदि २०० लोग एकसे दिखें तो एक तरह का वातावरण होगा और जब नया आदमी आयेगा इन २०० आदमियों को एक कपड़े में पायेगा तो एक हवा का रूख उसमें दिखाई देगा। यह दूसरे ढंग के कपड़े हो सकते हैं, इसका Psychological परिणाम है। जो सवाल उठता है न कि ऐसा भी कर लें वह भी डर का कारण है, वह भी डर की वजह से।

●●●

(श्री शिव को लिखे गए आचार्य श्री के दो प्रेरणा पत्र)

मेरे प्रिय,
प्रेम। सोच विचार कैसा ?
क्षण का भी तो भरोसा नहीं है।
समय तो प्रतिपल हाथ से चुकता ही जाता है।
और मृत्यु न पूछ कर आती है।
न ही बताकर ही।
फिर सन्यास का अर्थ है : सहज जीवन
वह आरोपण नहीं, विपरीत समस्त आरोपणों से मुक्ति है
सन्यास तुम्हारा निर्णय भो नहीं है।
वह तो तुमसे ही छुटकारा जो है।
सन्यास संकल्प नहीं समर्पण है।

रजनीश के प्रणाम
२२-१-१९७१

मेरे प्रिय,
प्रेम। मन है सन्यास का तो डूबो।
फिर स्थगन ठीक नहीं।
प्रभु जब पुकारे तो चल पड़ो।
फिर रुकना ठीक नहीं।
क्योंकि अवसर द्वार पर बार बार आये कि न आये।

रजनीश के प्रणाम
२३-१-१९७१

संकल्प और ध्यान

(आजोल साधना शिविर में आचार्य श्री द्वारा दिया गया प्रथम प्रवचन : २७ अगस्त ७०, रात्रि)

संकलन : मां आनंद मधु, आजोल

मेरे प्रिय आत्मन्,

जीवन एक रहस्य है। जिसे हम जीवन जानते हैं, जैसा जानते हैं वैसा ही सब कुछ नहीं है। बहुत कुछ है जो अनजाना ही रह जाता है। शायद, सब कुछ ही अनजाना रह जाता है जो हम जान पाते हैं, वह वैसा ही है जैसे कोई लहरों को देखकर समझ ले कि, सागर को जान लिया, लहरें भी सागर की हैं, लेकिन लहरों को देखकर सागर को नहीं समझा जा सकता। और जो लहरों में उलझ जायेगा वह सागर तक पहुंचने का शायद मार्ग भी न खोज सके। असल में, जिसने लहरों को ही सागर समझ लिया है उसके लिए सागर की खोज का सवाल ही नहीं उठता। जो दिखाई पड़ता है हमें, वह जीवन के सागर पर लहरों से ज्यादा नहीं है। जो नहीं दिखता है, वही सागर है, जो नहीं दिखाई पड़ता वही वस्तुतः जीवन है, जो दृश्य है वह सब कुछ नहीं, सब कुछ अदृश्य का छोटा सा अंश है। जो अदृश्य है वही सब कुछ है, लेकिन हम सब दृश्य पर ही अटक जाते हैं और, अदृश्य तक नहीं पहुंच पाते। जो ज्ञात है वह अणु भी नहीं है। और जो अज्ञात है, वह विराट है। लेकिन, हम सब अणु को ही विराट समझ लेते हैं, और जीवन की जो यात्रा विराट तक पहुंच सकती थी वह अणु के इर्द गिर्द ही घूम घूम कर नष्ट हो जाती है। जीवन रहस्य है जब मैं ऐसा कहता हूं तो मेरा मतलब है, जितना ही हम जानेंगे उतना ही जानने को सदा और भी मुक्त और खुला हो जायेगा, जितना हम जान लेंगे उतने जान लेने से जीवन समाप्त नहीं होगा बल्कि जितना हम जानेंगे उतना ही हमारे ज्ञान का अहंकार समाप्त हो जाता है, जो जितना जान लेता है उतना ही बड़ा अज्ञानी हो जाता है। इस जगत में अज्ञानियों के सिवा ज्ञानी होने का भ्रम और किसी को भी नहीं होगा। ज्ञानी को तो दिखाई पड़ने लगता है कि सब कुछ अज्ञात है, मुझसे बड़ा अज्ञानी कौन ? जितना ही हम जानते हैं, उतना ही जान नहीं पाते बल्कि जानने वाला ही धीरे धीरे खो जाता है, जितना ही हम खोजते हैं, खोज पूरी नहीं होती खोजने वाला ही समाप्त हो जाता है। इसलिए मैं कहता हूं जीवन रहस्य, मिस्टरी है। जीवन पहेली नहीं है पहेली और रहस्य में कुछ फर्क है। पहेली हम उसे कहते हैं जो हल हो सके। रहस्य हम उसे कहते कि जितना हम हल करें उतना ही हल होना मुश्किल होता जायेगा। पहेली उसे कहते हैं जिसकी कि सुलझ जाने की पूरी सम्भावना है क्योंकि पहेली को जानबूझ कर उलझाया जाता है। उलझन बनाई हुई, निर्मित है। जीवन पहेली नहीं है उसकी उलझन बनाई हुई नहीं है, निर्मित नहीं है, किसी ने उसे उलझाया नहीं है। सिर्फ सुलझाने वाले ही उलझन में पड़ जाते हैं। जीवन रहस्य है, उसका मतलब यह है कि सुलझाने की कोशिश की तो उलझ जायेगा, और अगर सहज स्वीकार कर लिया तो सब सुलझा हुआ है। जीवन रहस्य है इसका अर्थ यह है कि हम कहीं से भी यात्रा करें और कहीं को भी यात्रा करें अन्ततः जहां हम पहुंचेंगे वह वही जगह होगी जहां से हमने शुरू किया था। जीवन रहस्य का अर्थ है जो प्रारंभ का बिन्दु है वही अन्त का बिन्दु भी है। और जो साधन है वही साध्य भी है। और जो खोज रहा है वही खोजा जाने वाला भी है। यह रहस्य, इस जीवन की निश्चित कुंजी भी है, सिक्रेट की भी है, और उस सिक्रेट को समझने खोजने को हम यहां उपस्थित हुए हैं।

पहली बात जो व्यक्ति विचार से खोजने जायेगा जीवन को वह उलझा लेगा । विचार कुंजी नहीं है, कुँजी का धोखा है । कितना ही हम विचार करें, जितना हम विचार करेंगे, उतना हम जीवन से दूर चले जाते हैं । जितना ही हम विचार करते हैं, उतना ही सत्य से हमारा फासला बढ़ता चला जाता है । उन्हीं क्षणों में हम सत्य के निकट होते हैं, जब हम विचार से बाहर होते हैं । जो विचार करेगा वह भटक जायेगा । इसलिए इन चार दिनों में मैं आपको विचार करने को नहीं कहूंगा । इन चार दिनों में हम अनुभव करने की कोशिश करेंगे, थिंकिंग नहीं, विचार नहीं, एक्सपिरियन्स की अनुभव की अनुभूति की कोशिश करेंगे, अनुभूति ही कुंजी है, वे जो इस रहस्य को जानना चाहते हैं, खोलना चाहते हैं, उघाड़ना चाहते हैं उनके लिए अनुभूति के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है । लेकिन अक्सर ही अनुभूति की जगह हम विचार में उलझ जाते हैं । हम सोचने लगते हैं कि शक्ति क्या है, जीवन क्या है ? हम सोचने लगते हैं कि मृत्यु क्या है ? हम सोचने लगते हैं और जितना हम सोचते हैं, उतना ही हम सिद्धांतों को पा लेते हैं । लेकिन सत्य को पाने से वंचित रह जाते हैं । सब सोचना अन्ततः सिद्धान्त देता है । मृत, मरे हुए, सब सोचना शास्त्र दे सकता है–मृत मरे हुए । सब सोचना पहेलियां दे सकता है खुद की बनाई हुई, खुद की सुलझाई हुई, लेकिन सोचने से कोई सत्य तक न कभी पहुंचा है और न कभी पहुंच सकता तो पहली बात तो, आज की रात जो आपसे कहना चाहता हूं, वह साफ ठीक से समझ लें कि हम यहां सोच विचार के लिए इकट्ठे नहीं हुए हैं, हम कुछ सोचना नहीं चाहते, हम कुछ जानना चाहते हैं, हम भोजन के सम्बन्ध में विचार नहीं करेंगे हम स्वाद लेना चाहते हैं । हम तैरने के संबंध में शास्त्र नहीं पढ़ेंगे, हम तैरना ही चाहते हैं । हम फूलों के सौंदर्य के संबंध में सिद्धान्तों में नहीं जायेंगे, हम तो फूल को ही सीधा अपनी नाक पर रख लेना चाहते हैं । नहीं—हम प्रेम के संबंध में किसी विचारणा में उलझने की आकांक्षा नहीं रखते । हम तो प्रेम में डूब जाना चाहते हैं । अनुभव का अर्थ है, हम उतरना चाहते हैं । हम डूबना चाहते हैं, खोना चाहते हैं, सोचने का नहीं, सोचने का कोई सवाल ही नहीं है, जो भी सोचता है, वह किनारे पर बैठा रह जाता है और किनारे पर बैठ कर कोई कितना ही सोचे जन्मों जन्मों तक कभी नहीं पहुंच पाता, तब बस किनारे पर ही बैठा रहता है । ऐसा नहीं है कि कोई और किनारे पर बैठा होगा । हम भी जन्मों से सोचने के किनारों पर बैठे हैं । ऐसा तो कोई भी नहीं है जो कि पहली बार जिंदगी के किनारे पर बैठे हुए हैं । उन सबका तो हिसाब लगाना मुश्किल है, गणना करनी मुश्किल है कि जीवन के किनारे पर हम कितनी बार बैठ चुके हैं । अनन्त है वह यात्रा, अन्तहीन है वह कथा, लेकिन, बार बार हम सोचते ही रहे हैं, और बार बार सोच सोच के ही मरते रहे हैं, जान नहीं पाए हैं । उसे जो सदा निकट था, सोचने वाला कभी भी नहीं जान पाता । सोचने वाला जो निकट है उससे भी दूर चला जाता है । आप मेरे पास में बैठें हों, और मैं आपके संबंध में सोचने लगूं तो मेरे और आपके बीच हजारों मील का फासला हो जाता है । फूल पास में खिला हो, और मैं फूल के सम्बन्ध में सोचने लगूं तो मैं फूल से दूर निकल जाता हूं, सोचना दूरी है, अनुभव निकटता है । जीवन के रहस्य की पहली कुंजी अनुभूति पर जोर देती है । लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि विचार मत करना, अर्थात् विश्वास करना, नहीं । लेकिन, विश्वास करने को भी आपसे नहीं कहता । ऐसा दिखाई पड़ता है कि विश्वास शायद विचार का विरोधी है । नहीं—जो थोड़ा कम विचार करते हैं वे विश्वास कर लेते हैं । विश्वास विचार की ही बहुत मन्द मन्द, धीमी सी यात्रा है । जो थोड़ा ही सोचते हैं वे विश्वास कर लेते हैं । जो ज्यादा सोचते हैं वे अविश्वास पर पहुंच जाते हैं । विश्वास भी विचार ही है । थका हुआ, हारा हुआ, विश्वास भी अनुभव नहीं है, न विचार अनुभव है, न विश्वास अनुभव है । अनुभव दोनों से नहीं मिलता, अनुभव मिलता है प्रयोग से । एक्सपरीमेंट से । कोई वैज्ञानिक विचार नहीं कर रहा है और न कोई वैज्ञानिक विश्वास कर रहा है, अपनी प्रयोग-शाला में प्रयोग कर रहा है । आपको मैं किस प्रयोगशाला में ले जाऊं ? जीवन के लिए कोई प्रयोगशाला नहीं है ।

आप ही प्रयोगशाला हैं, आपको मैं आपके ही भीतर ले जाना चाहूंगा। जीवन की तलाश के लिए कहीं किसी और लेबोट्री में, किसी प्रयोगशाला में, किसी कांच की परख नली में, जांचने की जरूरत नहीं है। आप ही अपने भीतर जीवन के पूरे जागते हुए रूप हैं, अगर भीतर जा सकें तो जीवन की प्रयोगशाला में आप प्रवेश कर जाते हैं। यह न तो विश्वास से होगा, ना ही यह विचार से होगा, यह भीतर प्रवेश संकल्प से होता है। इसलिए इस कुन्जी का दूसरा सूत्र है संकल्प, "विल" संकल्प जितना तीव्र भीतर प्रवेश उतनी ही तीव्रता से हो जायेगा।

एक मित्र ने मुझे अभी एक छोटी सी घटना लिखकर भेजी। कनाडा में एक अभिनेता हुआ। चार्ल्स कार्लगन। मरने के १० साल पहले उसने वसियत की और कहा कि जब मैं मर जाऊं तो मेरी कब्र मेरे गांव में ही बनाई जाय। उसका गांव कनाडा के पास प्रिंस द्वीप था, एक छोटे से द्वीप पर। मैं अपने ही गांव में दफनाया जाऊं। लेकिन, जब उसने वसियत की थी तब उसके पास रुपये भी थे, इज्जत भी थी। अभिनेता की इज्जत और रुपये का कोई भरोसा नहीं। ऐसे तो किसी की इज्जत और रुपये का भरोसा नहीं। फिर अभिनेता की इज्जत और रुपया। जब वह मरा, तो बिल्कुल भीखमंगा था। लोग उसे बिल्कुल भूल चुके थे। भूले गए चेहरों में फरगाटन फेसेस में उसकी गिनती थी। और मरा भी तो अपने गांव से दो हजार मील दूर। वह मरा टेक्सास में, कौन फिकर करे उसकी वसियत की। कौन उसे पहुंचाये उसके पास कफन के पैसे भी नहीं थे। वह भी गांव के लोगों ने भरे। उसे दो हजार मील दूर की यात्रा कौन कराये। गांव के लोगों ने उसे दफना दिया। मरते वक्त आखिरी क्षण में भी उसके ओंठ पर एक बात थी आखिरी बात भी यही कही कुछ भी करके मुझे मेरे गांव भेज देना और जिस दरख्त के नीचे मैं पैदा हुआ उसी दरख्त के नीचे मुझे दफना देना। लेकिन, उसे कैसे उस जगह पहुंचाया जाय। दफनाया गया उसे, वहीं दो हजार मील दूर। उस रात बहुत हैरानी की घटना घटी। उस रात अचानक तूफान आ गया। ऐसा तूफान, जिसकी कि कोई संभावना ही नहीं थी। वृक्ष उखड़ गये, मकान गिर गए। जिस वृक्ष के नीचे उसे दफनाया गया था वह वृक्ष उखड़ गया जड़ों सहित और उसकी लाश भी उखड़ गई। एक लकड़ी के ताबूत में उसे गड़ाया गया था। उस ताबूत सहित लाश बाहर आ गयी। समुद्र वहां से दो मील दूर था। तूफान ने धक्के दे-दे के उसकी लाश को, उसके कफन को, सागर तक पहुंचा दिया। और दो हजार मील उस मुर्दे ने यात्रा की और प्रिन्स द्वीप के किनारे जाकर लग गया जहाँ वह पैदा हुआ था। जब लोगों ने उस ताबूत को खोला तो सारा शरीर गल गया था सिर्फ चेहरा बिल्कुल साबूत बच गया था। वे पहचान गए कि यह तो चार्ल्स कार्लगन है। वह तो इनके गांव का पैदा हुआ अभिनेता, उन्होंने उसी वृक्ष के नीचे दफना दिया, जहां वह पैदा हुआ था। मुझे किसी ने यह खबर भेजी कि क्या कहते हैं आप ? क्या इस आदमी का मरने के पहले का संकल्प इतना प्रभावशाली हो सकता है या यह केवल संयोग है ? या कि इसके संकल्प का परिणाम ? इतना प्रभावशाली संकल्प हो सकता है। जिन्दगी भर हम संकल्प से मरते हैं और जीते हैं। संकल्प हमारा कमजोर होता है तो कमजोर जिंदगी होती है, प्रबल होता है तो प्रबल जिंदगी होती है। आदमी के हाथ में एक ही ताकत है। वह उसके "विल फोर्स" की है। उसके संकल्प की है। नहीं— न तो कोई विश्वास से भीतर की यात्रा पर जाता है, न कोई विचार से भीतर की यात्रा पर जाता है न थिंकिंग से न बिलीफ से। जाता है विल से, संकल्प से, संकल्प को थोड़ा ठीक से समझ लेना जरूरी है, संकल्प का मतलब है जो मैं निर्णय ले रहा हूं वह पूरा है, वह निर्णय अधूरा नहीं है। यदि मैं शांत होना चाहता हूं तो यह मेरा निर्णय पूरा है। यह अधूरा नहीं है। ऐसा न हो कि मेरा आधा मन कहता हो शांत हो जाऊंगा आधा मन कहता हो क्या करोगे शांत होके ? आपका आधा मन, आपके बाकी आधे मन को काट देगा। आपका श्रम व्यर्थ हो जायगा। ऐसे ही होगा जैसे कोई आदमी दीवाल पर एक ईंट चढ़ाए और एक ईंट उतार ले और मकान कभी न बने। हम करीब-करीब जिन्दगी में ऐसे ही जीते हैं। हम सब संकल्प करते हैं और इधर से खींच

लेते हैं, सांझ एक आदमी कहता है कि सुबह पांच बजे उठना है, जब वह कहता है तब भी अगर थोड़ा भीतर झांके तो उसे पता है कि उठेगा नहीं वह, यह भी उसे मालुम है। वह पक्का करता है कि पांच बजे तो उठना ही है। तब भी थोड़ा बहुत गौर करें तो पता चलेगा कि भीतर वह आवाज मौजूद है जो कह रही है कहां उठोगे ? कैसे उठोगे ? रात बहुत सर्द है लेकिन, अभी इस आवाज को झुठला देना है, सो जाता है, सुबह पांच बजे जब घड़ी का अलार्म बजता है तब वह दूसरी आवाज जो सांझ भी मौजूद थी वह कहती है कहां इतनी सर्दी, फिर कभी सोचना, फिर कल उठना वह फिर सो जाता है। सुबह पछताता है। जब पांच बजे रात वह करवट बदल के सोता है तब भी भीतर एक आवाज होती है। तुम यह कह रहे हो सांझ निर्णय किया था सुबह पछताना पड़ेगा। लेकिन, उसको सुनता नहीं। सुबह उठता है, पछताता है मैंने निर्णय लिया था, मैं उठा क्यों नहीं ? अपना ही संकल्प आधा अपने ही आधे संकल्प से कट जाता है। मनुष्य की जिन्दगी का बड़ा से बड़ा दुःख यही है। उसका मन खुद ही खंडों में बंटा है और एक दूसरे को काट देता है। यह जो आने वाले दिनों में, हम एक अंतर्यात्रा पर जीवन की खोज पर, रहस्य के अनुभव के लिए जाने की तैयारी के लिए आए हैं ध्यान रखना कि संकल्प पूरा हो। पूरे मन से तैयारी हो, पूरा मन राजी हो, दुनिया में कोई रोक नहीं सकता। इस दुनिया में एक ही शक्ति है, जो कार्यकारी है, वह हमारे संकल्प की शक्ति है। लेकिन वही अगर हमारे पास नहीं है, तब बिलकुल निर्जीव हैं। जीते ही मरे हुये आदमी हैं। तो दूसरी बात आपसे कहना चाहता हूं। पहली बात विचार करने को हम यहाँ इकट्ठे नहीं हुये हैं। इसलिए तीन दिनों के लिये विचार की फिकर छोड़ देना। हम यहाँ विश्वास करने इकट्ठे नहीं हुये। इसलिये आप हिन्दू हैं कि मुसलमान हैं, जैन हैं कि ईसाई हैं, फिकर छोड़ देना। आपके विश्वासों से कोई मतलब नहीं है। आपके संकल्प भर से अर्थ है। अपने भीतर टटोल लेना कि जो भी निर्णय करूँ, वह पूरा है। ध्यान रहे छोटे-छोटे निर्णय से परीक्षा हो जाती है। इसलिये मैंने सोचा है कि कुछ लोग जो समझते हों, कि वे तीन दिन मौन रख सकते हैं, वे मौन ही रहें। वह तीन दिन का मौन उनके संकल्प का बड़ा आधार बन जायेगा। वे तीन दिन शब्दों का उपयोग ही न करें। थोड़ी अड़चन होगी, बहुत ज्यादा अड़चन न होगी। और एक दिन में आप अनुभव करेंगे कि ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं है, क्योंकि ज्यादा फिजूल बोल रहे हैं। जरूरत पड़े तो थोड़ा कागज पर लिख कर कुछ कह देना। अन्यथा तीन दिन अधिकतम् लोग मौन रह सकें तो गहरे परिणाम होंगे। छोटा सा संकल्प उनके लिए बड़ा उपयोगी हो जायगा। जो लोग तीन दिन तक चुप रह सकते हैं, बहुत छोटी सी बात है लेकिन, बात बड़ी है। क्योंकि चुप रहने का निर्णय अगर निभाया जा सकता है, तो आपके भीतर संकल्प की पृष्ठभूमि को निर्माण कर जायगा। और हम जो प्रयोग करने जा रहे हैं उसमें वह सहयोगी हो जायेगा। एक मित्र ने मुझसे आकर पूछा, आज्ञा मांगी है कि वे तीन दिन न तो बोलेंगे, शब्द का त्याग रखेंगे और न तो भोजन लेंगे, भोजन का त्याग रखेंगे और न वस्त्र पहनेंगे वस्त्र का त्याग रखेंगे। मैं मानता हूं उन्हें बहुत परिणाम हो सकेंगे आप भी इन तीन दिनों के लिए अपना ही कोई संकल्प खोज लें तो भी चलेगा। मौन तो बहुत सरलतम है। कोई तीन दिन उपवास रखना चाहे तो तीन दिन उपवास रखना, कोई तीन दिन एक बार ही खाना खाना चाहें तो एक बार ही खायें। कोई आधा खाना खाना चाहें तो आधा खायें। लेकिन, जो भी संकल्प करें उसे तीन दिन पूरा करें। तीन दिन के बीच में बदलना नहीं है। कोई तीन दिन वस्त्र छोड़ना चाहे तो वस्त्र छोड़ दे कोई कम वस्त्र करना चाहे तो कम वस्त्र कर ले, जो भी जिसको ठीक लगे तीन दिन के लिए दो चार संकल्प अपने आसपास खड़े कर लें और उनमें जीने की कोशिश करें। तीन दिन उनको तोड़ना ही नहीं है चाहे खुद टूट जायें। पर वह संकल्प नहीं तोड़ना। सोचना संकल्प विस्तार का नाम है। हम कैसे उसे अपने चारों तरफ फैला लें और हमारा व्यक्तित्व संकल्प से कैसे चारों तरफ आपूरित हो जाये। ऐसे छोटे छोटे

निर्णय कर लेने के लिए आ.से कहता हूं तो जो जिसके ख्याल में आ जाये यह तो मैंने उदाहरण के लिए सुझाया है। जो जिसके ख्याल में आ जाये वह इन तीन दिनों के लिए दो चार संकल्प अपने मन में ले लें। किसी को कहने की जरूरत नहीं क्योंकि किसी से कोई मतलब नहीं और बाकी लोगों से मैं यह कहता हूं कि इन तीन दिनों में कोई भी आदमी कुछ भी करता मालूम पड़े उस पर न सोच विचार करना, न आप उसकी चिंता लेना और कृपा करके बाधा तो देना ही मत। क्योंकि पता नहीं उसने क्या संकल्प लिया है। अगर आपको कोई आदमी धूप में खड़ा हुआ मिल जाये तो मत रोकना कि धूप में क्यों खड़े हो। हो सकता है उसने संकल्प लिया हो धूप में खड़ा हो। अगर कोई आदमी दो घंटे तक खड़ा हो तो आप मत कहना उसे कि बैठ जाइये क्योंकि हो सकता है कि उसने दो घंटे खड़े होने का संकल्प किया हो। कोई रेत पर लेटा हो तो मत रोकना लेटे रहने देना। कोई कुछ भी कर रहा हो। इस शिविर में कोई दूसरे व्यक्ति को किसी शिष्टाचार, किसी संकोच, किसी औपचारिकता का निभाव नहीं करना है। यहां आप बिलकुल अकेले हैं। बाकी से आपको कोई प्रयोजन नहीं। यह संकल्प तो कम से कम सभी ले लें मैं अकेला हूं। बाकी को आपसे कोई भी प्रयोजन नहीं। इन तीन दिनों में कौन क्या कर रहा है वह उसकी बात है वह उसका अपना काम है। कोई आपको सोचता मिल जाये तो आपको फिकर नहीं करनी है, कोई रोता मिले तो आपको फिकर नहीं करनी है। कोई रास्ते पर खड़ा होकर हँस रहा हो तो आपको फिकर नहीं करनी है। आप अपने रास्ते पर हैं। और प्रत्येक व्यक्ति अपने संकल्प ले ले। उसे अपने क्या क्या संकल्प पूरे करने हैं यह उसकी निजी बात है। जो हम साधना करेंगे वह तो अलग होगी। यह उसकी निजी बात हुई। जिससे उसके संकल्प की शक्ति की पृष्ठभूमि खड़ी हो जायेगी। साधारणतः लोग कहते सुने जाते हैं, गलत है उनकी बात बुनियादी रूपसे। आज भी एक मित्र आये थे कहने लगे कि मुझे ऐसा लगता है कि ध्यान करने में जिन लोगों के पास संकल्प की शक्ति कम होती है, जिनका "विल पावर" कमजोर होता है, उन लोगों को जल्दी हो जाता है। मैंने उनसे कहा यह नासमझी की हद है। ऐसे ख्याल हैं। असल में जिसको नहीं होता, उनको कुछ तो जस्टीफिकेशन चाहिए उनको क्यों नहीं हो रहा? उनको इसलिए नहीं हो रहा है कि उनके पास संकल्प की शक्ति बहुत ज्यादा है। तो महावीर के पास संकल्प की शक्ति कम रही होगी यह आदमी १२ वर्ष में सिर्फ १ वर्ष भोजन किया। सब मिलाके जितने दिन भोजन किया वह एक वर्ष के बराबर है। ३६५ दिन बराबर एक वर्ष। यह संकल्प की कमजोर शक्ति का परिणाम होगा! बुद्ध की संकल्प शक्ति कमजोर रही होगी। जीसस की संकल्प शक्ति कम जोर रही होगी कि शूली पर चढ़ते वक्त ईश्वर से कहें कि इन सबको माफ कर देना क्योंकि इनको पता नहीं है कि वे क्या कर रहे हैं। मन्सूर की संकल्प शक्ति कमजोर रही होगी जब उनके लोग हाथ पैर काट रहे थे तब भी वह हँस रहा था। नहीं इस जगत में जिन्होंने ध्यान किया है, उनके पास ही संकल्प की शक्ति है। और अगर आपको न हो सके तो जानना कि आपकी संकल्प शक्ति कमजोर है। उसे उठाया जा सकता है, उसे जगाया जा सकता है। लेकिन इस तरह के भ्रान्त ख्याल मन में मत ले लेना कि मेरी संकल्प शक्ति बहुत ज्यादा है। संकल्प शक्ति का मतलब यह होता है कि जो हम करना चाहते हैं कर सकते हैं। अगर हम शान्त होना चाहते हैं तो दुनिया की कोई ताकत हमें अशान्त नहीं कर सकती। लोगों के संबंध में हमने सुना है, देखा है, आग के अंगारे पर नाचते जाते हैं कुछ भी नहीं सिर्फ संकल्प शक्ति है। यह ख्याल पक्का कि नहीं जल सकूंगा। इतना सा ख्याल कि नहीं जल सकूंगा इतनी क्षमता दे जाता है कि आग का साधारण नियम काम नहीं कर पाता। थोड़े से संकल्प की प्रतिभा हो भीतर तो हम और जो संकल्प छिपा है हमारे भीतर, उसे भी उठा लेते, उसे भी जगा लेते हैं। गुर्जिएफ कुछ साधकों को लेकर, जैसे मैं आज आपको लेके आ गया हूं ऐसा गुर्जिएफ नाम का फकीर, कुछ साधकों को लेकर, तिसलिस गांव के बाहर ठहरा हुआ था। उसने उन सबसे कहा था कि जब भी मैं कह दूं "स्टाप" ठहर जाओ, जो जहां हो वहीं ठहर जाय

और अगर किसी आदमी ने बांया पैर ऊपर उठाया है चलने के लिए तो बांया ऊपर ही रह जाय और जमीन पर नहीं लगे और गिरे तो गिर जाय आदमी लेकिन, अपनी तरफ से पैर को नीचे नहीं रखें। किसी की आंख खुली है तो खुली रह जाय, आंख अपनी तरफ से बंद नहीं हो, आंख बंद हो जाय बात अलग है लेकिन, भीतर ख्याल रहे कि मैंने बंद नहीं की। मुंह खुला है बोलने के लिए तो खला ही रह जाय। उनको बहुत से प्रयोग करवा रहा था, संकल्प का प्रयोग है। अपने साथ भी बेईमानी करते हैं, कोई आदमी, बाँया पैर उठाया कि वह सोचेगा कि एक सेकेण्ड में पता क्या चलता है ? कि मैंने नीचे रख दिया और फिर स्टाप कर दूं। लेकिन, गुर्जिएफ को धोखा देने का सवाल नहीं है इससे गुर्जिएफ का क्या लेना देना अपने आपको धोखा देना है। एक सुबह बहुत ही अद्‌भुत घटना घटी पास ही एक नहर थी जहां शिबिर था उनका, नहर सूखी है, अभी पानी नहीं बहा उसमें, बन्द है नहर, तीन युवक नहर को पार कर हैं। अचानक तंबू के भीतर से गुर्जिएफ ने आवाज दी "स्टाप" रुक जाओ। वे तीनों नहर में रुक गये। सूखी नहर थी पानी नहीं था, लेकिन तभी अचानक न मालूम किसी ने नहर खोल दी, और जोर पानी की धार आई। एक युवक तो पानी की धार को आते देखकर, छलांग लगाई बाहर आ गया और गुर्जिएफ को पता नहीं वह तो तम्बू के भीतर बैठा है यह तो प्राण लेना हो जायगा ध्यान। वह छलांग लगाकर बाहर हो गया। पानी की धार गले तक आ गई तब दूसरे युवक ने सोचा कि अब जरा जरूरत से ज्यादा हुआ जा रहा था, अब मुझे निकल जाना चाहिए। अभी तक ठीक था लेकिन गुर्जिएफ को क्या पता कि प्राण निकल जायेंगे। वह छलांग लगाकर बाहर हो गया। एक युवक भीतर रह गया। पानी की धार उसके ओठों को छुई। फिर उसकी नाक डूबी, उसके मन में भी एक दो बार ख्याल आया कि मैं निकल जाऊँ। लेकिन उसने कहा कि वायदा किया है तो वायदा पूरा करना है। उसके मन में भी ख्याल आया कि गुर्जिएफ तम्बु के भीतर बैठा है। उसको क्या है। लेकिन कहा कि यह तो जब मैंने वायदा किया था तब कोई शर्त नहीं थी कि तम्बू के भीतर होंगे कि पता होगा कि नहीं होगा। यह कोई शर्त न थी। शर्त तो सिर्फ इतनी थी कि स्टाप यानि ठहर जाने की। इसलिए अब सवाल उठने का नहीं। सिर पर से पानी बह गया गुर्जिएफ भागा। वह नहर उसने ही छुड़वाई थी। सब जाना हुआ इन्तजाम था। वह भागा हुआ बाहर आया, वह नहर में कूदा उस युवक को बाहर निकाला। उस युवक से कहा कि क्या हुआ तुम्हारे मन में जब पानी ऊपर से चला गया। उसने कहा मन में ? पहली दफा पता चला, पहली दफा मन समाप्त हुआ मैं ही बचा और मैंने पा लिया जिसकी तलाश में मैं आया था। गुर्जिएफ ने कहा कि लेकिन अकेले नहर में डूबने से कैसे पा लोगे ? लेकिन उसने कहा नहर में नहीं डूबा, संकल्प में डूबा। वह आदमी दूसरा आदमी हो गया। उसके भीतर कोई चीज केन्द्रित हो गई है। उस व्यक्ति की आत्मा पैदा हो गयी। उसने पुकार ली सारी शक्ति जो उसके भीतर पड़ी थी। एक दांव पर। इन दिनों में बहुत तरह के दांव है, बहुत तरह की चुनौतियां हैं, आपको मैं दूंगा अगर आप दांव पर लगा सकते हैं तो बहुत परिणाम हो जायेंगे। संकल्प स्मरण रखें। कुछ भी अपने संकल्प तय कर लें किसी को बताने की जरूरत नहीं है। आपके भीतर तय कर लें क्योंकि वह आपकी बात है। पूरे करेंगे तो आप, नहीं पूरे करेंगे तो आप। ईमानदारी तो अपने प्रति, बेईमानी तो अपने प्रति। किसी से कुछ कहने की जरूरत नहीं उसको अपने भीतर लें। यदि पूरा कर पाए तो इस शिविर से खाली हाथ लौटने की जरूरत नहीं होगी अगर पूरा नहीं कर पाये तो समझ लेना चाहिए कि मेरे अतिरिक्त मेरी खोज में और कोई बाधा नहीं। लेकिन सब पूरा किया जा सकता है, कोई कठिनाई नहीं। सिर्फ कठिनाई का ख्याल ही एकमात्र कठिनाई है, कि कैसे पूरा करें ? छोटे से लें, बड़े की जरूरत नहीं है। तीसरी बात इसके पहले कि कल सुबह हम ध्यान शुरू करें आपको ध्यान के सम्बन्ध में कुछ समझा दूं ताकि आपके मन में साफ हो जाये। पहली बात तो यह है क ध्यान की प्रक्रिया स्वयं में सोई हुई शक्ति को जगाने की प्रक्रिया है। उसे कुंडलिनी कहें, उसे प्राण कहें, उसे और कोई नाम दे दें। हम सबके

भीतर बहुत कुछ सोया हुआ है, वह जाग न जाय तो हमारी यात्रा के लिए शक्ति नहीं उपलब्ध होती। जिस शक्ति से हम जीते हैं वह बहुत ऊपरी है। बहुत शक्ति है हमारे भीतर, जो विश्राम कर रही है। जो सो रही है, जिसे हमने छोड़ा है, जिसे छुयेंगे भी नहीं वह हमारे साथ रहेगी, हम मर जायेंगे। जैसे किसी आदमी के पास तिजोरी हो और वह अपने खीसे में १०) रुपये रखे हो उन्हीं को अपनी संपत्ति समझकर अपनी जिंदगी गवां दे, भूखा रहे, प्यासा रहे, भीख मांगे, और तिजोरी का उसे पता ही न हो जो कि उसकी है। लेकिन, ऐसे नासमझ आदमी बहुत मुश्किल से खोजने से मिलेंगे, जिनके पास तिजोरी हो, जिनको पता न हो। लेकिन, जहां तक जिंदगी का सम्बन्ध है ऐसे नासमझ आदमी ही मिलेंगे। खोजने से वह आदमी मुश्किल से मिलेगा जिसने अपनी जिंदगी की पूरी संपत्ति का उपयोग किया हो। तो ध्यान की प्रक्रिया का पहला चरण तो है हमारे भीतर की पूरी शक्ति को जगाने का। इस शक्ति को जगाने के लिए कोई चोट, कोई हेमरिंग की जरूरत है। हम स्वांस का उपयोग करेंगे। पहले दस मिनिट के चक्कर में हम इतने जोर से स्वांस लेंगे हम हथोड़ी की तरह उपयोग करेंगे, वह स्वांस चोट करें बाहर फेंकें। उस चोट के भीतर सोई हुई शक्ति को जगाना शुरू करें। आपको शायद पता न हो जब भी आपको शक्ति की जरूरत पड़ती है, आपको होश हो या न हो, इस स्वांस की चोट से जगायी जा सकती है। आपने कभी ख्याल न किया होगा, बड़ा पत्थर उठाना हो, अचानक आप गहरी स्वांस भीतर लेंगे, फिर पत्थर को उठाते हैं। कभी आपने सोचा न होगा कि गहरी स्वांस लेकर भीतर रोक लेने से, पत्थर उठाने का क्या संबंध ? गहरी स्वांस के बिना उस पत्थर को न उठा सकेंगे। जिन लोगों ने पिरामिड के पत्थर चढ़ाये आज वैज्ञानिक बहुत परेशान हैं कि उस वक्त क्रेन नहीं थी इतने बड़े पत्थर पिरामिड पर चढ़ाये कैसे गये ? तो उनको चमत्कार मालूम पड़ता है। दुनिया के मिराकिल्स में इतने बड़े बड़े पत्थर, इनको सौ सौ आदमी मिलकर भी नहीं चढ़ा सकते थे, चढ़ाये कैसे गए। उन्हें पता नहीं जिस इजिप्त में जो पिरामिड बने, उस इजिप्त को, उन्हें एक साइन्स का पता था जिसे धीरे धीरे भूल गये वह थी स्वांस की चोट से भीतर सोई हुई शक्ति को उठा लेने का रहस्य। आपने राममूर्ति का नाम सुना होगा। वह अपनी छाती पर हाथी को खड़ा कर सकता था अपनी छातीपर से कार या ट्रक को निकल जाने देता था। या खुद चलती हुई कार को पीछे से पकड़ ले तो चक्के घूम सकते थे लेकिन कार आगे नहीं बढ़ सकती थी। राज छोटा सा वह राज यह था कि स्वांस की चोट से और स्वांस को भीतर रोक लेने से भीतर की पूरी शक्ति को पुकारने की तरकीब का पता उन्हें चला, हमारे भीतर जो भी शक्ति पड़ी है उसे चोट करके जगाना है। दस मिनिट का जो पहला चरण ध्यान में जो हम करेंगे उसमें इतने जोर से स्वांस लेनी है कि भीतर कोई गुन्जाइश भी न रह जाए कि हम इससे ज्यादा ले सकें। स्वांस की हम पूरी ताकत लगा दें। जब आप स्वांस की पूरी ताकत लगायेंगे शरीर हिलने लगेगा, शरीर कांपने लगेगा, झूलने लगेगा तो उसे झूलने देना। स्वांस की चोट मारनी शुरू करना जितने जोर से चोट पड़ेगी उतने ही जोर से शरीर डोलेगा। शरीर डोलेगा उतनी ही आसानी होगी चोट मारने में। सख्त हो के खड़े नहीं हो जाना चोट मारनी है, शरीर को डोलने देना, उस चोट के साथ, शरीर के साथ डोलने लगना। दस मिनिट में पूरी की पूरी हमारे फेफड़े में जितनी भी वायु है रूपांतरित कर लेना उस सबको बदल देना। हमारे फेफड़े में कोई ६ हजार छिद्र हैं इसमें मुश्किल से एक या दो हजार में हमारी स्वांस पहुंचती है बाकी चार हजार सदा ही बंद पड़े रहते हैं उनमें कार्बन डाइआक्साइड इकट्ठी होती रहती है। पूरे के पूरे फेंफड़ों में सारे के सारे छिद्रों में आक्सीजन प्राणवायु पहुंचा देनी है। जैसे ही प्राणवायु की मात्रा भीतर बढ़ती है वैसे ही शरीर की विद्युत जागनी शुरू हो जाती है। आप अनुभव करेंगे शरीर इलेक्ट्रीफाइड हो गया है। उसमें बिजली दौड़ने लगी, रोआं रोआं कांपने लगे शरीर नाचने की स्थिति में आ जाये, यह पहला चरण। पहले चरण के और भी अर्थ हैं वे भी मैं आपको कह दूं अगर यह चरण पूरा नहीं किया गया तो दूसरे में प्रवेश नहीं हो सकेगा। ऐसे ही जैसे पहली सीढ़ी पर न चढ़ा हो तो

दूसरी सीढ़ी पर न चढ़ें। पहली सीढ़ी पर पैर रखना जरूरी है तभी दूसरी सीढ़ी पर चढ़ा जा सकता है। दूसरी बात ध्यान रखना जरूरी है कि अगर यह चरण पूरा नहीं किया गया तो बहुत से नुकसान हो जाने का डर है। परसों ही एक जापानी साधिका मेरे पास आई वह यहां शिविर में मौजूद है उसने मुझसे पूछा कि इन्डोनेशिया में सुबुध नाम का ध्यान प्रयोग चलता है, उसमें ध्यान का पहला चरण नहीं है, उसमें दूसरा ही चरण है। तीसरा चरण जो है वह भी नहीं है तो इस सुबुध के संबंध में मेरा क्या ख्याल है ? अगर पहला चरण हो, जैसा सुबुध नाम के ध्यान में नहीं है बड़े खतरे हैं। पहले चरण से आपके शरीर की पूरी विद्युत विकसित होकर आपके शरीर के चारों ओर वर्तुल बना लेती है। अगर यह वर्तुल न बने तो आपको ऐसी बिमारियां पकड़ सकती हैं जिनकी आपको कल्पना भी नहीं है। आप बीमारियों के लिए नॉन रेसिसटेन्ट की हालत में हो इसलिये सुबुध का प्रयोग करने वाले बहुत से लोग अजीब अजीब बिमारियों से पीड़ित हो जाते हैं। इसलिए पहला चरण पूरा होना बहुत जरूरी है। आपके चारों तरफ विद्युत का वर्तुल बनाना बहुत जरूरी है। अन्यथा ध्यान में, एक तरह की ओपनिंग, एक तरह का द्वार खुलता है उसमें से कुछ भी प्रवेश हो सकता है। और न केवल बीमारी ही हो सकती है बल्कि सुबुध के अनेक साधकों को बड़ी से बड़ी कठिनाई हुई है वह यह कि कुछ दुष्ट आत्माएँ उनमें प्रवेश कर सकती हैं। ध्यान की हालत में आपके हृदय का द्वार खुला हो जाता है उस वक्त कोई भी प्रवेश कर सकता है। हमारे चारों तरफ बहुत तरह की आत्माएँ निरन्तर उपस्थित हैं। यहां आप ही उपस्थित नहीं हैं और भी कोई उपस्थित है इसलिए पहले चरण को हर हालत में पूरा करना जरूरी है। अगर पहला चरण पूरा हो तो आपका शरीर एक तरह का रेसिसटेन्ट एक तरह की प्रतिरोध की दीवाल खड़ी कर लेता है। उसमें से कोई भी हानिकारक चीज आपके भीतर प्रवेश नहीं पा सकती और आपके भीतर से कोई भी शक्ति बाहर नहीं जा सकती। वह दिवाल का काम करने लगती है। जैसे कि हम अपने घर के चारों तरफ एक बिजली का तार दौड़ा दें और उसमें करेंट दौड़ रही हो, तो चोर भीतर नहीं घुस सकेगा क्योंकि तार छुयेगा तो मुश्किल में पड़ जायेगा। ठीक, पहले चरण का यही महत्वपूर्ण काम है, कि वह आपके चारों तरफ विद्युत का वर्तुल बना दें। न तो भीतर से कुछ बाहर जा सके और न बाहर से भीतर कुछ आ सके। तीसरी बात, पहले चरण के संबंध में, यह समझ लेनी जरूरी है जब आपकी शक्ति भीतर चोट खाकर जगेगी तो आपको बहुत तरह के अनुभव शरीर में होने शुरू हो जायेंगे। वह आपको मैं कह दूं ताकि आपको परेशानी न हो क्योंकि बीच में पूछने का कोई उपाय नहीं। शरीर में बहुत तरह के अनुभव हो सकते हैं। अलग अलग तरह के लोगों को अलग अलग तरह के अनुभव होंगे। किसी को लगेगा, शरीर बहुत बड़ा और घबड़ाहट होगी। किसी को लगेगा शरीर पत्थर की तरह भारी हो गया घबड़ाहट होगी। किसी को लगेगा शरीर बहुत छोटा हो गया तो आंख खोलकर देखने का मन होगा कि मामला क्या है ? मैं खो तो नहीं गया कहीं ? लेकिन, आंख खोलकर देखना नहीं है। आप अपनी जगह हैं, कहीं कुछ खो नहीं गया है। ये सारी परिस्थितियाँ उस शरीर में नई शक्ति के जगने से होनी शुरू हो जायेंगी। किसी के शरीर में सांप बिच्छू रेंगते हुए मालूम पड़ने लगेंगे। किसी को चीटियाँ चढ़ती मालूम पड़ने लगेंगी। किसी के भीतर विद्युत की धारा बहती मालूम पड़ने लगेगी किसी को लगेगा कि कोई चीज झरने की तरह ऊपर से नीचे गिर रही है। किसी को मालूम पड़ेगा कि कोई चीज नीचे से ऊपर को चढ़ रही है। इस तरह के बहुत अनुभव शरीर में होने शुरू हो जायेंगे। और इसके साथ ही शरीर कुछ हरकतें, कुछ मूमेंट करना चाहेगा। उनको रोकना नहीं है। दस मिनिट में शरीर पूरी तरह में चार्ज शक्ति से भर जाता है। तो दूसरे चरण में जब शरीर को छोड़ेंगे, वह जो करना चाहे उसे करने दें दूसरे चरण में शक्ति को खेलने का मौका दें, वह जो शक्ति जगी है उसको कोआपरेट करना सहयोग देना। साधारणतया हम रोकते हैं हमारी जिंदगी भरकी आदत हर चीज को रोकने की। अगर हंसी भी आती

है तो हम धीरे से हंसते हैं, जोर से नहीं हंसते। रोना भी आता है तो सम्हाल लेते हैं क्योंकि रोना शोभा नहीं देता। नाचने का तो कोई सवाल ही नहीं है, कूदने का कोई सवाल नहीं है। हाथ पैर अव्यवस्था से हिलाने का कोई सवाल नहीं है। जिंदगी में हम सब रोके रखे हैं। जबकि शक्ति आपके भीतर की जगेगी तो आपके भीतर जो रुका है वह सब प्रकट होना चाहिए। इसको आप चाहें रोकना, तो रोक सकते हैं। लेकिन रोकने से भयंकर नुकसान होगा क्योंकि जो शक्ति जग गयी है, अगर आपने उसको रोका तो वह आपके लिए शारीरिक रुपसे नुकसानकारी सिद्धहोगी। उसका जुम्मा मुझ पर नहीं होगा, ध्यान का प्रयोग व्यर्थ तो चला ही जायेगा उससे नुकसान भी होने शुरू हो जायेंगे। शरीर में ग्रंथियाँ और गाँठें बन जायेंगी। उस शक्ति को, वह निकलना चाहेगी आप रोक लेंगे तो जैसे ही पहले चरण के बाद शक्ति पैदा होगी आपका शरीर जो भी करना चाहे उसे पूर्णता से सहयोग देना, कोई नाचने लगेगा, कोई चिल्लाने लगेगा, कोई रोने लगेगा। कोई हसने लगेगा, कोई अस्तव्यस्त मुद्राएं बनाने लगेगा, कोई आसन बनाने लगेगा, शरीर जो भी करना चाहे उसे बिल्कुल ऐसा छोड़ देना है जैसे हमें कोई प्रयोजन नहीं सिर्फ साथ देना है। यह इतनी तीव्रता से साथ देना है कि अगर हाथ थोड़ा हिल रहा हो तो पूरा साथ देना कि वह पूरा हिल जाय। रोकने से नुकसान है। सहयोग देने से अभूतपूर्व फायदे हैं। अगर आपने पूरा सहयोग दे दिया तो आपके शरीर की न मालूम कितनी बीमारियां जो आपके पीछे पड़ी हों, अचानक विलीन हो सकती हैं। आपके मनके न मालूम कितने रोग जो चित्त को घेरे हों क्रोध, काम, लोभ अचानक आप पा सकते हैं कि मन हल्का हो गया। वे बह गए। दुःख, उदासी, पीड़ा, वैमनस्य, ईर्ष्या वे सब गिर जाते हैं। अगर शरीर को पूरी तरह से आपने खेलने का मौका दिया तो आपका शरीर ही नहीं आपके मन की भी कथार्शीश हो जाती रेचन हो जाती है। और दस मिनिट का जो सबसे बड़ा उपयोग है वह यही है कि शरीर का रेचन हो जायेगा और शरीर मन का सब कुछ जो रुग्ण हमने इकट्ठा किया हुआ है वह गिर जायेगा उसके बाद ही हम ध्यान में प्रवेश कर सकते हैं। जैसे कोई पहाड़ पर चढ़ रहा हो तो सब बोझ नीचे छोड़ जाता है, बोझ साथ में हो तो पहाड़ पर चढ़ना असंभव होता है। जैसे ऊँचाई बढ़ती है, वैसे बोझ छोड़ना पड़ता है। ध्यान की बड़ी ऊँचाइयां हैं, गहराइयां हैं उनमें जाने के लिए सब बोझ छोड़ जाना बहुत जरूरी है इसलिए जो संकोच करें उनका समय व्यर्थ होगा। जो शिष्टाचार का ध्यान रखें, उसका समय व्यर्थ होगा और समय ही व्यर्थ नहीं होगा और पहला चरण अगर पूरा कर लिया है उसे पाजिटिव हार्म, उसे विधायक रूप से हानि पहुंचेगी। क्योंकि अपने काम में लगे होंगे किसी से किसी को प्रयोजन नहीं, कोई किसी को नहीं देखता होगा, किसी को देखने से मतलब नहीं, बहुत से मित्रों को ऐसा अनुभव होगा कि जब बहुत तीव्रता से शरीर हल्का हो रहा होगा, तो थोड़ा सा वस्त्र भी एकदम पहाड़ की तरह, पत्थर की तरह भारी हो जायेगा। महावीर पागल नहीं थे कि नग्न हुए। नग्न होने का कारण है। और सैकड़ों लोग उस ध्यान का प्रयोग कर नग्न हुए, उसका कारण है। ऐसा नहीं है कि वह नग्नता आपके लिए अनिवार्य बन जायेगी। एक दफे चित्त हलका हो जाये, तो आप वापिस लौट आयेंगे इस दुनिया में और सीधे और साफ हो सकेंगे। ये जो रेचन है यह सदा नहीं चलेगा ज्यादा से ज्यादा तीन महीने चल सकता है कम से कम तीन सप्ताह चल सकता है। अगर किसी ने बहुत तीव्रता की तो तीन दिन में समाप्त हो जायेगा जब गिर जायेंगी सारी बीमारीयां तों आप एकदम हल्के और शांत हो जायेंगे फिर नहीं चलेगा फिर आप करना भी चाहें तो नहीं कर सकेंगे। दूसरे चरण पर ध्यान देना बहुत जरूरी है। क्योंकि सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। तीसरे में प्रवेश के लिए वह लिंक, सेतु का काम करता है। और दूसरे में ही सबसे ज्यादा बाधा पड़ती है। न तो आप खुलके नाच पाते हैं, न चिल्ला पाते हैं, न रो पाते हैं, न डोल पाते हैं। उससे बाधा पड़ जायेगी। मन में से न जाने क्या निकलना शुरू होगा। जानवरों जैसी आवाज निकलने लगेगी। आपको डर लगेगा कि मैं कैसे निकालूं? उसे निकलने देना। जो भी हो रहा है उसे स्वीकार करके

उसका साथ दे देना, पूरा साथ दे देना अगर आप पूरा साथ दे सके तो परिणाम सुनिश्चित है। अद्‌भुत परिणाम होंगे जिनकी आप कल्पना भी नहीं कर सकेंगे। दूसरा चरण पूरा हो तो ही हम तीसरे में प्रवेश हो सकेंगे। जो दूसरे पर अटक जायेगा और दूसरे पर अटकना पहले पर अटकने से भी ज्यादा हानिकर है, क्योंकि शरीर ने काम करना शुरू कर दिया तो आप न मालुम किस तरह की नई तरह की रुग्णताओं को, नई तरह की मानसिक विक्षिप्तताओं को निमंत्रण दे सकें। हर चीज की हानि उतनी ही होती है जितना लाभ होता है। उनकी मात्रा बराबर होती है। अगर आप लाभ लेते हैं तो पूरा लें अन्यथा हानि हाथ पड़ जायेगी। या फिर, करें ही मत जहां हैं वहीं बेहतर हैं। करना है तो पूरा समझ के करें। और, पूरा प्रयोग करें ताकि किसी को हानि न हो जाय। तीसरे चरण में, जब दूसरे चरण में पूरी तरह शरीर की गतियां शुरू होगी तो आपको शरीर अलग मालूम होने लगेगा। वही उस दूसरे चरण का कीमती अनुभव है। जब शरीर नाचेगा, चिल्लाएगा, जानवरों की आवाज करने लगेगा, कुछ भी बकने लगेगा, कुछ भी बोलने लगेगा, रोने लगेगा, हंसने लगेगा तब आपको पहली दफे पता चलेगा कि आप अलग खड़े देख रहे हैं, और यह शरीर क्या कर रहा है ? यह आपको भिन्नता का पहला अनुभव कि मैं साक्षी की तरह देख रहा हूं, यह हो रहा है, सुना है हमने बहुत, कि मैं अलग हूं और यह शरीर अलग है। यह सुनी हुई बात है, यह आपको अनुभव हो सके और यही दूसरे चरण का प्रतिफल है कि अनुभव हो जाय, कि मैं अलग हूं और शरीर अलग है। जैसे ही यह अनुभव होता है तीसरे में हम गति कर जायेंगे। तीसरे चरण में पूछना है अपने भीतर मैं कौन हूं यह इतने जोर से पूछना है, भीतर ही पूछना है लेकिन इतने जोर से पूछना है कि पैर से लेकर सिर तक गूंजने लगे भीतर मैं कौन हूं क्योंकि जब यह दिखाई पड़ता है कि शरीर मैं नहीं हूं यह सवाल उठता है कि मैं कौन हूं और इस मौके को छोड़ नहीं देना है इसे तीव्रता से पूछना है १० मिनट अपने भीतर यह तूफान उठा देना है कि मैं कौन हूं। दो मैं कौन हूं के बीच में जगह न बचे। जब आप बहुत जोर से भीतर पूछेंगे तो बहुत संभव है कि आपके मुंह से बाहर निकले। तो उसका भय नहीं लेना है। शुरू करना है भीतर अगर बाहर भी निकलने लगे तो चिंता नहीं करनी, निकल जाने दें। तीसरे चरण में भी शरीर डोलेगा, नाचता रहेगा उसकी चिन्ता नहीं लेकिन डोलने देना, नाचने देना। तीसरे चरण में मैं कौन हूं इतनी तीव्रता से पूछना है कि मन में और ख्याल ही न रह जाय। अगर आपने पूरी ताकत तीसरे चरण में लगा दी तो चौथा आपको उपलब्ध होगा। चौथे चरण में आपको कुछ भी नहीं करना है। तीन चरण में हमें करना है, चौथे में विश्राम। चौथे में सिर्फ, कोई खड़ा है, खड़ा रह जाएगा, कोई गिरा है, गिरा रह जायेगा, कोई बैठा है बैठा रह जायेगा जो जैसा है, वैसा रह जाएगा। चौथे चरण में हम सिर्फ, प्रतीक्षा करेंगे। जो भी हो उसमें, उसकी हम प्रतीक्षा करेंगे। बहुत कुछ हो सकता है। बहुत कुछ होगा। कुछ अनुभव की आपसे बात करूं, ताकि आपको हो, आपको परेशानी न हो जाय। किसी के भीतर एकदम बिजली के कौंधने जैसा प्रकाश हो जाय, किसी के भीतर हजारों सूरज जले हों ऐसा प्रकाश हो जाय। किसी के भीतर सुबह का जैसे प्रभात होता है, ऐसा प्रकाश हो जाएगा। सबके भीतर अलग-अलग होगा। प्रकाश का अनुभव होगा अधिकतम लोगों को। कुछ थोड़े से लोगों को गहन अंधकार का भी अनुभव होगा। कोई अनुभव अनिवार्य नहीं है। सबको भिन्न-भिन्न होंगे क्योंकि सबके व्यक्तित्व भिन्न हैं। किसी को नीला रंग दिखाई पड़ेगा किसी को लाल रंग दिखाई पड़ेगा। किसी को कोई ध्वनियां सुनाई पड़ेंगी, किसी को कोई स्वाद उतरने लगेगा। पांचों इन्द्रियों के अनुभव में से कोई भी अनुभव होना शुरू हो जाएगा। वैसा प्रकाश आपने बाहर कभी नहीं देखा होगा जैसा भीतर दिखाई पड़ेगा न वैसी ध्वनि बाहर सुनी होगी जैसी भीतर सुनाई पड़ेगी। यह होगा। यह चौथे चरण में होगा। चौथे चरण के बाद पांचवा चरण हम यहाँ नहीं उठायेंगे, आपको तीन चरण करने हैं चौथा होने देना है और पांचवा फिर कभी पीछे आपको होगा। किसी को यहां भी हो सकता है। उसकी बात नहीं करनी, पाँचवे में सब समाप्त हो जाएगा। न तो

प्रकाश रह जायेगा, न अंधकार रह जाएगा, न कोई ध्वनि रह जाएगी, न कोई रंग रह जाएगा। पाँचों इन्द्रियों के सब अनुभव खो जायेंगे, पांचवे चरण में जो होगा, उसके लिए कहने का कोई भी शब्द नहीं है। वह जब आपको होगा तभी आप जान सकेंगे। चौथे चरण तक हम प्रयोग करेंगे, और पांचवा चरण आपको फलित होगा, किसी को यहां भी फलित हो जायेगा किसी को घर जाकर होगा, किसी को कुछ वख्त लगेगा। लेकिन, यदि आप जारी रखते हैं तो पांचवां चरण भी आ जायेगा। जब सब खो जायेगा। चौथे के अनुभव भी खो जायेंगे। इस पूरी प्रक्रिया में संकल्प ही एक मात्र आधार है। इसलिए इस प्रक्रिया को करने के पहले हम परमात्मा को साक्षी रखके, संकल्प करेंगे तीन बार, और अन्त में अपने संकल्प को पूरा करने का ख्याल रखेंगे पूरे समय क्लायमेक्स पर करना है प्रत्येक चरण को उसकी चोटी पर 'पिक' पर आखरी ऊँचाई पर करना है। उसमें कंजूसी नहीं चलेगी। जैसे कि पानी भाप बनता है सौ डिग्री पे जा के, गरम होता है ९९ डिग्री पर भी रह जाता है तो पानी रह जाता है उबलता, पर भाप नहीं बनता। सौ डिग्री पर भाप बनता है। तो आपको अपनी सौ डिग्री ताकत लगा देनी है तो ही आप दूसरे चरण में प्रवेश करेंगे। अगर आपने तीन चरणों में सौ डिग्री ताकत लगा दी तो आप पायेंगे, एव्होपरेशन हो गया वाष्पीकरण हो गया, आप उड़ जायेंगे, आप नहीं बचेंगे, कोई और आपके भीतर आ जाएगा। वही जीवन का रहस्य कहें, समाधि कहें, मुक्ति कहें। निर्वाण का अनुभव कहें जो भी हम शब्द देना चाहे दे सकते हैं। ये तीन चरण इस संबंध में जो भी प्रश्न होंगे वे आप लिख के देते जायेंगे तो रोज रात को हम बात कर लेंगे। तो अब मैं समझता हूं अभी वख्त है, तो हम प्रयोग भी करेंगे। प्रयोग अभी कर लेंगे ताकि सुबह से बिलकुल गति से शुरू हो जाय इसमें कोई कमी न रह जाय। यह प्रयोग खड़े होकर करने का है। और फासले पर खड़े होना है, यहां तो जगह काफी है ताकि कोई नाचे तो किसी को चोट न लग जाय, किसी को धक्का न लग जाय और आपको धक्का लग भी जाय तो आपको फिकर नहीं करनी है आपको अपना काम जारी रखना है तो अब आप दूर-दूर फैल जायें। बातचीत बिल्कुल न करें।

सब शांत हो जायें, आँख बंद करें। संकल्प करें-- "४० मिनट तक आँखें बंद रहेगीं।"

संकल्प करें, प्रभु को साक्षी रख के कि "ध्यान में मैं पूरी शक्ति लगाऊंगा।" ●

वह

—शिव

दुनिया की निगाह में
मैं एक अदना आदमी हूं
क्योंकि न ज्यादा पढ़ा लिखा हूं
न कोई बड़ी पदवी है
और न ही ज्यादा धन दौलत,
लेकिन मैं [यानि अदना] भी जिन्हें अदना समझता था
उन्हें भी जिस प्रेम और सम्मान से मिलते उसे देखा है
वह है अवर्ण्य ! अकथ्य !!
यहां तक कि हम जिसे मिट्टी कहते हैं
उस पर भी आंखें खोलकर कोई देखे, तो पायेगा
वह जैसे फल पर चलता है !!

संन्यास के नये आयाम

संन्यास-जीवन के इतिहास में नये युग का प्रारंभ

प्रस्तोता—**स्वामी योग चिन्मय (आचार्य रजनीश के सचिव)**

हिमाचल प्रदेश की गोद में बसी सौंदर्य मनाली में २५ सितम्बर, ७० से ५ अक्टूबर, १९७० तक युग दृष्टा आचार्य श्री रजनीश के सान्निध्य में एक साधना शिविर सम्पन्न हुआ। इस शिविर में श्री कृष्ण के व्यक्तित्व साधना और संदेश पर सविस्तार चर्चा हुई। ध्यान साधना के गहरे प्रयोग भी आयोजित हुए।

इस शिविर में आचार्य श्री के जीवन का एक नया आयाम सामने आया। उन्होंने वहां कहा कि संन्यास जीवन की सर्वोच्च समृद्धि है। उसे पूर्णता में सुरक्षित रखा जाना चाहिए। लेकिन आज संन्यास दुःखवाद निराशावाद, जीवन-विरोधक व दरिद्रता के आवरणों में ग्रस्त हो गया है।

आचार्य श्री को प्रेरणा हुई कि वे संन्यास जीवन को एक नया मोड़ देने में सहयोगी हो सकेंगे और **नाचते हुए, गाते हुए, आनंद मग्न, समस्त जीवन को आलिंगन करने वाले, सशक्त व स्वावलम्बी संन्यासियों के जन्म में वे साक्षी बन सकेंगे।**

अतः मनाली शिविर में १६ व्यक्तियों ने **सोधे परमात्मा से सावधिक** (Periodical) **संन्यास की दीक्षा ली। आचार्य श्री इस घटना के साक्षी व गवाह बने। इस घटना से 'संन्यास जीवन' के इतिहास में एक नये युग का प्रारंभ हुआ।** पूरे मुल्क में व विश्व के कोने-कोने में 'संन्यास जन-सुलभ हो सके, तथा संन्यास की विद्या, कला और विज्ञान का उपयोग प्रत्येक व्यक्ति कर सके इस लक्ष्य को लेकर **उनके धर्म-चक्र प्रवर्तन का एक नया आयाम प्रारंभ हुआ है।**

संस्कार-तीर्थ, पोस्ट आजोल, तालुका बीजापुर, जिला महेसाणा (गुजरात) में स्वामी कृष्ण चैतन्य तथा मां आनंद मधु की प्रेम छाया में देश व विदेश के नव-दीक्षित संन्यासियों की साधना व जीवन-शिक्षण के लिए एक केन्द्र निर्मित हुआ है। ५-६ संन्यासियों का एक छोटा सा 'कम्यून' वहां सृजन तथा धर्म चक्र प्रवर्तन की दिशा में संलग्न हो चुका है। यह धर्म तरु दिन-प्रतिदिन विकसित होकर अनेक शाखाओंयुक्त एक विराट वृक्ष बन सकेगा जिसकी शीतल छाया में लाखों प्यासी आत्माओं को शांति व अमृत उपलब्ध होगा।

यह संदेश घर-घर, व्यक्ति-व्यक्ति तक पहुंच सके, **ताकि जीवन की परिधि में कर्म सार्मथ्य की प्रक्रिया तथा व्यक्तित्व के अंतस् केन्द्र में संन्यास की मुक्ति, सन्यास की शांति, संन्यास के आनंद व संन्यास की सुगंध का जन्म हो सके, इस आशा से हम यह सूचना प्रकाशित करते हैं।**

***

'जिन खोजा तिन पाइयां' : एक प्राक्कथन

—स्वामी योग चिन्मय

('जिन खोजा तिन पाइयाँ' पुस्तक आचार्य श्री रजनीश के कुण्डलिनी-योग पर दिये गए १८ प्रवचनों का संकलन है। फरवरी १९७१ के अंतिम सप्ताह तक प्रकाशित होने वाली इस पुस्तक के पृष्ठ हैं ७०० और मूल्य है २०) रुपये। प्रस्तुत अंश उपर्युक्त पुस्तक का प्राक्कथन है।

—संपादक

सत्य की खोज—जीवन के, अस्तित्व के रहस्यों की खोज है।

जीवन है, जगत है, अस्तित्व है, होश है, इंद्रियां हैं, बुद्धि है।

लेकिन, इन सबके होते हुए भी जीवन का सत्य अज्ञात और अपरिचित है।

और **जीवन का यह अज्ञान, यह अपरिचय पीड़ादायी है।**

और फिर जीवन के प्रवाह में मनुष्य विकास की जिस स्थिति पर पहुंचा है, वह भी अपर्याप्त और अधरा है।

विराट संभावनाओं की तुलना में मनुष्य एक बीज मात्र ही है।

बहुत कुछ उसमें सुप्त छिपा हुआ है।

जागरण की एक लम्बी शृंखला मनुष्य के भीतर प्रतीक्षारत है।

मनुष्य की चेतना को विकास के अनेक कक्षों व आयामों में गुजरना है।

अनेक परतें हैं, अवरोध हैं जिन्हें चीरकर मनुष्य चेतना अपनी पूरी ऊँचाई पर प्रगट हो सकती है।

तभी सत्य की उपलब्धि है और पीड़ाओं का अतिक्रमण है।

विराट मनुष्य-सभ्यता के इतिहास में व्यक्तित्व के इस चरम विकास को कुछ ही लोग उपलब्ध हो सके हैं।

हम कुछ व्यक्तियों को अंगुलियों पर याद करते हैं--कृष्ण, महावीर, बुद्ध, लाओत्से, क्राइस्ट, मुहम्मद आदि।

और भी अनेकों पृथ्वी-पुत्र जीवन के इस अमृत को, ज्ञान को, शिखर को उपलब्ध हुए हैं।

लेकिन, इतिहास उन्हें याद न रख सका।

अनेक साहसी लोगों ने हजारों वर्षों से सत्य के, अस्तित्व के, जीवन के रहस्यों व अतल गहराइयों की खोज में बड़ी अन्तर्यात्रायें की हैं।

उनकी लम्बी परम्परा रही है, लम्बी शृंखला रही है।

मनुष्य के इस अस्तित्वगत अन्तर्विकास व अन्तर्यात्रा की जो प्रक्रिया जानी पहचानी व खोजी गई है उससे ही धर्म का निर्माण हुआ है।

जैसे पदार्थ, जगत व स्थूल जीवन के रहस्यों की खोज विज्ञान ने की है, उसी प्रकार एक **अस्तित्वगत अन्तरात्म-जगत व अन्तश्चेतना-जगत की खोज भी है,** जिसके परा–विज्ञान (Occult Science) को धर्म ने विकसित किया है।

इस खोज को धर्म साधना कहता है और इसकी अन्तः प्रक्रियाओं को योग। योग के भी अनेक आयाम विकसित हुए हैं। जैसे हठयोग, राजयोग, मंत्रयोग, लययोग, स्वरयोग, नादयोग, कुण्डलिनी–योग आदि

योग-विद्या ने ही बौद्ध–साधना, इस्लाम-साधना, सूफी-साधना, ताओ-साधना, क्रिश्चियन साधना के रूप में दूर-दूर देशों में बड़ी यात्राएँ की हैं।

योग के विविध आयामों में कुण्डलिनी साधना सर्वाधिक महत्वपूर्ण व उपयोगी सिद्ध हुई है।

क्योंकि, कुण्डलिनी साधना में सर्वाधिक प्रकार के व्यक्तित्वों का अन्तर्विकास समाहित हो जाता है।

कुण्डलिनी की अन्तर्यात्रा स्थूलतम आधार से शुरू होकर सूक्ष्म से सूक्ष्म होती हुई सूक्ष्मातिसूक्ष्म का भी अतिक्रमण कर परम सत्य तक पहुंचाती है।

कुण्डलिनी साधना में व्यक्तित्व की समस्त संभावनाओं का सर्वांगीण विकास संभव है।

कुण्डलिनी साधना अपने विकास की उचाइयों में योग के अनेक आयामों को और विविध प्रक्रियाओं को अपने में समाहित कर लेती है। इसीलिए इस साधना को सिद्ध-योग और महा-योग नाम भी दिया गया है।

कुण्डलिनी साधना आन्तरिक रूपान्तरण व जागरण की वैज्ञानिक प्रक्रिया है।

इसमें अस्तित्वगत रूपान्तर (Existencial Transformation) घटित होता है।

कुण्डलिनी साधना में व्यक्ति का सुप्त आत्म-बीज टूटता है, फूटता है, अंकुरित होता है।

और फिर उसका पौधा विकसित होता हुआ विराट जीवन-वृक्ष बनता है।

फिर उस पूर्ण विकसित व्यक्ति-वृक्ष में फूल खिलते हैं—ध्यान के, समाधि के, और फल आते हैं – आनन्द के, शांति के, प्रेम के।

फिर उसमें से सुगंध व आलोक फैलता है—मुक्ति का, अनुग्रह का, आप्त- कामता का।

और तब व्यक्ति खो ही जाता है—अनंत रहस्यमय अस्तित्व में।

एक रस हो जाता है—जीवन के स्रोत में।

जीवन की सारी सीमाएं, विरोध, द्वन्द और पीड़ाएं समाहित व शांत हो जाती हैं, उस परम सत्य की उपलब्धि में।

लेकिन, साधक को उस उपलब्धि की **खोज** में निकलना होगा।

यात्रा करनी होगी स्वयं के भीतर।

श्रम करना होगा स्वयं के अस्तित्व के साथ।

साधना करनी होगी अपनी ही वृत्तियों व अन्तर्स्थितियों के साथ।

जगाना होगा अपने ही भीतर की सोयी हुई शक्तियों को, सोये हुए केंद्रों को लम्बी यात्रा है। लेकिन, जिज्ञासु, खोजी व भावान मुमुक्षु के लिए वह जरा भी लम्बी नहीं है।

साधना में छलांग लगी कि समय गया।

फिर तो परमात्मा की शक्ति ही सारे रूपांतरणों को सम्पन्न करती चली जाती है।

और किसी दिन पाया जाता है कि बिना कुछ प्रयास किये ही, बिना अहंकार व कर्ता के संघर्ष के ही परम सत्य प्रगट हो गया।

तब प्राण-प्राण, कण-कण और सारा अस्तित्व अनुग्रह और प्रार्थना से नाच और गा उठता है : "उसकी अनुकम्पा अपार है।"

कुण्डलिनी—योग पर आचार्य श्री रजनीश के अद्भुत, अनूठे, अद्वितीय प्रवचनों का प्रस्तुत संकलन "जिन खोजा तिन पाइयां" इसी अन्तर्यात्रा के लिए आह्वान भी है और चुनौती भी।

साधक, मुमुक्षु व परम-अर्थ के खोजी जन इसमें पायेंगे कि **ये प्रवचन "कागज की लेखी" नहीं हैं, इसमें सब कुछ "मैं कहता आंखन की देखी" है।**

ये प्रवचन खरे हैं, निखरे हैं—अनुभव की कसौटी पर हजारों बार कसे हैं।

कुण्डलिनी–योग पर आज तक उपलब्ध सारे साहित्य में "जिन खोजा तिन पाइयां" का अपना अनूठा योगदान होगा।

इसमें शास्त्रीयता व सिद्धांतों की बोझिलता आप जरा भी न पायेंगे।

सारे के सारे प्रवचनों में एक जीवन्त-प्रवाह है।

एक-एक शब्द आचार्य श्री के प्राणों से और उनके अस्तित्व की गहराइयों से प्रवाहित हुआ है।

निश्चित ही वह आपको भी छू जाएगा, झकझोर जायगा, जगा जाएगा और अंतर्यात्रा की ओर एक बड़ा धक्का दे जायगा।

प्रथम पांच प्रवचन साधना शिविर, नारगोल, जिला-बलसार गुजरात के हैं तथा शेष १३ प्रश्नोत्तर चर्चाएं बम्बई में विशिष्ट साधकों की एक गोष्ठी के बीच सम्पन्न हुईं।

इस संकलन में अधिकतर चर्चाएं प्रायोगिक (Experimental) हैं।

उनमें अनेक संकेत हैं।

जिनसे साधना की गहराइयों में डुबकी लगाने वाले साधक और भी अधिक गहराइयों में छलांग लगाने के लिए उत्प्रेरित होंगे।

इनमें कुण्डलिनी साधना व तंत्र के कुछ गुहय् आयामों (Esoteric Dimensions) के भी संकेत हैं, जिनमें प्रायोगिक प्रवेश का विस्तार तो केवल अधिकारी साधक जान पायेंगे।

इन प्रवचनों व चर्चाओं में न केवल कुण्डलिनी साधना पर प्रकाश डाला गया है वरन **कुण्डलिनी के द्वारा ही कुण्डलिनी के अतिक्रमण** (Transcendence of Kundalini) पर भी काफी बातें की गई हैं।

शक्तिपात, प्रभु-प्रसाद (ग्रेस) और सात शरीरों पर इतने वैज्ञानिक ढंग से बात कभी भी प्रकाश में नहीं आई है।

आचार्यश्री के स्वानुभव व अनेक जन्मों के अनंत साधना-प्रयोगों का इनके पीछे आधार है।

आत्म-शरीर, ब्रह्म-शरीर और निर्वाण-शरीर की साधनाओं पर जो कुछ कहा गया है, वह तो हिन्दी योग-साहित्य व विश्व-साहित्य के लिए **अनूठी व ऐतिहासिक देन** सिद्ध होगी।

सामान्यतया आज तक **कुण्डलिनी साधना** का प्रयोग केवल आश्रमों में चुने हुए साधकों पर किया जाता रहा है। **सामान्य जन समूह उससे बिल्कुल ही अछूता व अपरिचित रहा है।** क्योंकि, पिछली ज्ञात कुण्डलिनी विधियों के अपने खतरे थे, जिसके कारण उसे चुने हुए लोगों तक सीमित रखना जरूरी भी था।

लेकिन, आचार्य श्री के ही शब्दों में :

"मनुष्य जाति के इतिहास में आने वाले कुछ वर्ष बहुत महत्वपूर्ण हैं। अब दो-चार आध्यात्मिक लोगों से काम नहीं चलेगा। अगर एक ऐसे **बहुत बड़े आध्यात्मिक आन्दोलन का जन्म** नहीं होता जिसमें लाखों-करोड़ों लोग एक साथ प्रभावित हो जायें तो दुनिया को भौतिकवाद के गर्त से बचाना असंभव हो जाएगा। और बहुत मोमेन्टस (महत्वपूर्ण और निर्णायक) क्षण है कि पचास साल में भाग्य का (मनुष्य सभ्यता का) निपटारा होगा। या तो धर्म बचेगा या निपट अधर्म बचेगा।

"वह जो संघर्ष चल रहा है सदा से वह बहुत निपटारे के मौके पर आ गया है और अभी तो जैसी स्थिति है, उसे देखकर आशा नहीं बनती है। लेकिन, मैं निराश नहीं हूं। क्योंकि, **मुझे लगता है कि बहुत शीघ्र बहुत सरल, सहज मार्ग खोजा जा सकता है जो करोड़ों लोगों के जीवन में क्रांति की किरण बन जाय.....**"

"जिन खोजा तिन पाइयां" में इसी करुण-अभीप्सा का समाधान समाहित है।

इसमें जिस ध्यान की प्रक्रिया का प्रयोग किया गया है वह **अपने ढंग का अनूठा और नया अनुसंधान है।** इसका प्रयोग अकेले एकांत में तथा हजारों की संख्या में एक साथ भी किया जा सकता है। अनेक बड़े साधना शिविरों में हजारों लोगों ने इसका अभ्यास किया है।

भारत में हजारों लाखों की संख्या में लोग इससे लाभान्वित हो रहे है ।भारत के बा र भी अनेक देशों में प्रयोग का संदेश पहुंचना शुरू हुआ है और शीघ्र ही निकट भविष्य में लाखों की संख्या में विदेशियों को भी इसका प्रयोग लाभान्वित करेगा।

इस प्रयोग में कुण्डलिनी साधना के सारे संभाव्य खतरों का निराकरण है। इसमें साधक की योग्यता व क्षमता के अनुसार प्रतिक्रियायें घटित होती हैं तथा वे सब साधक को आगे की गहरी प्रतिक्रियाओं के लिए **पुष्ट व सक्षम** भी बनाती चलती हैं।

इस ध्यान-प्रयोग में मनुष्य **व्यक्तित्व के आमूल रूपान्तरण** (Total Transformation) **की कीमिया है।**

यह विधि पूर्ण स्वावलम्बन व स्वतन्त्रता की है। इसमें आगे के रास्ते व आयाम स्वतः ही खुलते चले जाते और साधक को मार्ग-निर्देशन की आवश्यकता नगण्य सी रह जाती है।

इसकी विधि इतनी सरल है कि इसे दो-तीन दिन सीखकर कोई भी व्यक्ति, चाहे वह किसी उम्र का हो, घर पर इसका प्रयोग स्वयं कर सकता है। टेपरिकॉर्डर से अथवा रेडियो-प्रसारण (Radio Broadcastngi) से भी इसका अभ्यास किया जा सकता है।

विद्यार्थियों के शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के लिए इस प्रयोग का अद्‌भुत योगदान है। **नयी पीढी को इस ध्यान-प्रयोग से बड़ी सृजनात्मक दिशा मिल सकती है।**

इस साधना विधि का बड़ा **चिकित्सात्मक मूल्य** (Therupeutic Value) भी है।

ध्यान की गहराइयों और ऊंचाइयों म जान क पहले इसका अधिकतर प्रभाव शारीरिक बीमारियों व मानसिक विकृतियों के रेचन व शोधन में होता है।

भविष्य में इस ध्यान-विधि का **आध्यात्मिक-शक्ति से विशाल समूह-रोग-मुक्ति** (Mass Healing) **में बड़ा उपयोग हो सकेगा।** सैकड़ों ध्यान प्रयोग करते हुए साधकों के बीच में यदि रोगियों को चुपचाप शांत और मौन बिठा दिया जाय तो बड़ी संख्या में रोग मुक्ति घटित हो सकती है।

"जिन खोजा तिन पाइयां" पुस्तक से आचार्यश्री के व्यक्तित्व का एक नया गुह्य (Esoteric) **व परा-वैज्ञानिक** (Occult) **आयाम उद्‌घाटित होता है।** इसके साथ ही उनके गहन अनुभवों व उपलब्धियों का जगत प्रकाश में आता है। भविष्य में इसी तरह के अनेक विशालकाय प्रवचन-संकलन प्रगट होंगे जिनमें— सूफी-साधना, जेन-साधना, जैन-साधना, हिन्दु-साधना, ताओ-साधना, क्रिश्चियन-साधना व तंत्र साधना आदि की अनेक प्रणालियों पर प्रवचन होंगे।

अन्तर्वस्तु-अनुक्रम में विषय-सार-सूची इतने सविस्तार से बनाई गई है कि पाठक को एक ही दृष्टि में विषयों के विस्तार व गहराई की एक झलक मिल जाएगी। अतः उन सबके सम्बन्ध में अधिक उल्लेख की यहां आवश्यकता नहीं रह जाती है।

पाठकों की सुविधा व परिचय के लिए इस पुस्तक में २२ फोटो प्लेट्स में ध्यान-प्रयोग में विभिन्न साधकों को होने वाली अनेक प्रतिक्रियाओं की झलकें प्रस्तुत हैं। चित्रों के संबंध में सूत्रवत् जानकारी भी उनके पीछे अंकित कर दी गई है।

अंतिम बात।

आज जीवन्त-धर्म व साधना के अभाव में सारी मनुष्यता पागलपन व विनाश के कगार पर खड़ी है। धर्म व अध्यात्म की ऊंचाइयां व दिव्य-पुरुषों की बातें पौराणिक कथाएं मात्र बनती जा रही हैं आध्यात्मिक उपलब्धियों के दावे मात्र शाब्दिक व भ्रामक बनते जा रहे हैं। **कृष्ण, महावीर, बुद्ध, क्राइस्ट जैसे लोगों का लम्बा अभाव लोगों के मन में उन जैसे लोगों के अस्तित्व की संभावना तक को संदिग्ध बनाये दे रहा है।** और विज्ञान तथा तथाकथित साम्यवाद धर्म को पूरी तरह से नष्ट करने की तैयारी में है। आधुनिक सभ्यता में जन-जीवन से **धर्म व साधना का आयाम होता चला जा रहा है।** इस संकटकालीन स्थिति से व्यथित हो करुणावश आचार्य श्री ने **चेतावनी** दी है, **पुकार** लगाई है, **आह्वान** किया है।

"हमें आदमी चाहिये कृष्ण जैसे, जीसस जैसे, बुद्ध जैसे, महावीर जैसे। अगर हम आने वाले पचास वर्षों में वैसे आदमी पैदा नहीं करते हैं तो मनुष्य जाति एक अत्यन्त अंधकारपूर्ण युग में प्रविष्ट होने को है। उसका कोई भविष्य नहीं है·····

इसलिए जिन लोगों को भी लगता हो कि जीवन के लिए वे कुछ कर सकते हैं, उनके लिए एक बड़ी चुनौती है। **और मैं तो गांव-गांव यह चुनौती देते हुए घूमूंगा** और जहाँ भी मुझे कोई **आंख** मिल जायेगी **जो** लगेगा कि **दिया बन सकती है,** उनमें (आत्म) ज्योति जल सकती है, तो उन पर मैं अपना पूरा श्रम करने को तैयार हूं। **मेरी तरफ से पूरी तैयारी है।** देखना है कि मरते वक्त मैं भी कहीं यह न कहूं कि सौ आदमियों को खोजता था, वे मुझे नहीं मिले।"

उनकी इस पुकार को सुनकर देश व विदेश के बहुत से साधक सामने आते चले जा रहे हैं। और भी अनेक साधक समय पर आयेंगे इसकी प्यासी, मौन व प्रार्थनापूर्ण प्रतीक्षा है।

और अंत में पाठक इस बात को ध्यान रखें कि साधना सोच-विचार, मनन-चिंतन और बौद्धिक विश्लेषण नहीं है। वे साधना से बचने के उपाय हैं। **साधना स्वयं की अज्ञात गहराइयों में छलांग लगाने का साहस है। साधना स्वयं को आमूल बदल डालने का संकल्प है। साधना स्वयं के नये जन्म की प्रसव-पीड़ा से गुजरने की तैयारी है।**

साधना के जगत में लाखों लोगों को **प्रायोगिक** (Experimental) **प्रेरणा** इस पुस्तक से मिल पायेगी **इस आशा और आश्वासन तथा चुनौती और आमंत्रण के साथ प्रस्तुत है— जिन खोजा तिन पाइयां।**

●

प्रेम प्रसंग

शिव ने आचार्य श्री को २३ दिसंबर को एक पत्र लिखा कि— "नहीं समझ पाता, मुझ जैसे पापी को भी आप क्यों प्रेम करते हैं ?"

फिर 'प्रेम के फूल' नामक पुस्तक में संकलित आचार्य श्री के पत्रों को पढ़कर दूसरे ही दिन पुनः लिखा—

मेरे प्यारे प्रभो !

कल एक पत्र जा चुका है। आज पुनः लिख रहा हूं।

आज ही 'प्रेम के फूल' में आपके पत्र पढ़ा हूं। कई पत्रों को पढ़कर हंस पड़ा हूं कि तुम कितनी लीलाएं करते हो। कई को पढ़कर रो पड़ा हूं हां, खूऽऽऽब रोया हूं कि तुम कितने करुण हो !!

●

और हां, लीला तो तुम करते ही हो, कर ही रहे हो। ठीक है। लीला ही सही। झूठ-मूठ के ही सही। एक बार तो मुझको भी चिट्ठी लिखते। सच बताना प्यारे प्रेमी ! क्या तुमको कभी मेरी भी याद आती है ? लेकिन आह मेरी पीड़े ! इस लीलामय पर भरोसा भी तुझे कैसे होगा ? और कौन समझेगा तुझे ? क्योंकि उसी पर तूने भरोसा किया है जो सबसे अधिक बेभरोसा है !!

●

प्रेम के फूलों की माला गूंथने वाले चिन्मय जी को हार्दिक धन्यवाद। क्रांति दीदी को मेरे प्रेमपूर्ण आंसू। तुमको मेरा गुस्सा ! शेष सबको प्यार !!

तेरा ही शिव
२४. १२. ७०

(उपर्युक्त पत्रों के आचार्य श्री द्वारा लिखे गए उत्तर)

प्रिय शिव,

प्रेम । प्रेम सदा अकारण है ।

और इसलिये जिस प्रेम में कारण होता है वह प्रेम नहीं रह जाता ।

प्रेम सौदा नहीं है ।

वह लेन-देन के व्यवसाय-जगत् के बाहर है ।

और यही उसका सौंदर्य है ।

इस पार्थिव पृथ्वी पर प्रेम अपार्थिव की किरण है ।

इसलिए प्रेम के सहारे प्रार्थना तक पहुंचा जा सकता है ।

और प्रार्थना के सहारे प्रभु तक ।

इसीलिए मैं कहता हूं कि **प्रेम के अतिरिक्त और कोई धर्म नहीं है ।**

रजनीश के प्रणाम

: ८-१२-७०

प्रिय शिव,

प्रेम ! **जो समझ में आ जाय वह प्रेम नहीं है।**

फिर समझ सब कुछ तो नहीं है ?

समझ के बाहर भी बहुत कुछ है ।

और **जो समझ के बाहर है वही गहरा है ।**

समझ है सतह ।

समझ सदा ही ऊपर ऊपर है ।

और इसलिए जो समझ पर ही रुक जाते हैं, उनसे ज्यादा नासमझ और कोई भी नहीं हैं !

लहरें समझी जा सकती हैं ।

सागर अबूझ है ।

इसलिए समझो जरूर—लेकिन समझ को स्वयं की सीमा न समझो ।

उसके पार भी झांकते रहो ।

उसका अतिक्रमण भी करते रहो ।

समझ का उल्लंघन ही अन्ततः सत्य की समझ बनता है ।

रजनीश के प्रम

२९-१२-१९७०

मेरे प्रिय,

प्रेम। मुझे सबकी याद **रहती** है—**आती** नहीं।
न रहे तब ही याद को आना पड़ता है।
आने में पीड़ा है।
क्योंकि, आने में जाना भी छिपा है।
रहने में आनन्द है।
क्योंकि फिर न आना है, न जाना है।
शायद यह बात समझ में भी न आये।
मुझे भी कोई समझाता तो समझ में न आती।
बहुत कुछ है जो कि समझाने से समझ में आता ही नहीं है।
उल्टे और भी उलझ जाता है।
लेकिन, जैसा है वैसा मैं कह रहा हूं।
किसी को भी कभी याद नहीं करता हूं; फिर भी याद बनी रहती है।
हृदय की धड़कनों की भांति।
जानूं या न जानूं, हृदय तो धड़कता ही रहता है।
या श्वासों की भांति।
लूं या न लूं, श्वासें तो चलती ही रहती हैं।
बस ऐसी ही मेरी याद है।
इसलिए, जब कोई पूछता है : "कभी मुझे याद करते हैं या नहीं ?"
तब मैं मुश्किल में पड़ जाता हूं।
सोचता हूं कि क्या कहूं ?
हां भी ठीक नहीं है !
ना भी ठीक नहीं है !
इसलिए **हंसता हूं और चुप रह जाता हूं !**
लेकिन तुमने तो लिखकर पूछा है।
इसलिए हंसने और चुप रह जाने का भी उपाय नहीं छोड़ा है!

रजनीश के प्रणाम
३०-१२-१९७०

आचार्य श्री रजनीश जी के बंबई जीवन जागृति केंद्र के तत्वावधान में १३ मार्च से २१ मार्च ७१ तक "सक्रिय ध्यान के प्रयोग" एवं "गीता" पर प्रवचन आयोजित हैं।

मेरी संन्यास यात्रा

स्वामी आनंद विजय
ज ब ल पु र

(संन्यास विशेषांक से यह विशेष स्तंभ प्रारंभ किया है। इसमें हम संन्यासी साधकों की उनकी संन्यास यात्रा प्रकाशित करेंगे। अतः निवेदन है कि जिन संन्यासी साधकों ने आचार्य श्री रजनीश जी की साक्षी में अपने संन्यास के संकल्प को लिया है, वे कृपया अपनी संन्यास यात्रा हमें पहुंचायें -)

—संपादक

मैं एक कपड़ा व्यवसायी होने के नाते मुझे अक्सर बंबई, अहमदाबाद जाने का मौका मिलता रहता है। उसी बीच घटी हुई घटना को आपके सामने रखता हूं। मेरा तारीख २२-१२-७० को अहमदाबाद जाने का कार्यक्रम था। मेरे इसके पहले कोई भी कार्यक्रम केन्सिल नहीं हुए थे, लेकिन उस दिन जाना अनायास रुक गया। दूसरे दिन बड़े भाई ने कहा कि तुम्हें जाना तो पड़ेगा ही—इस पर मैंने कहा कि मैं २७-१२-७० तक चला जाऊँगा। लेकिन २४-१२-७० को भोजन करके मैं दुकान आया, मध्यान्ह २-३० बजे लेटरिन का ख्याल हुआ और मैं घर चला आया—यह अचानक हुआ। घर आया तो बच्चे बाहर ही खेलते थे, तो उन्होंने पूछा कि क्या बाबू आप बंबई जाते हैं, मेरे मुंह से निकल पड़ा—हाँ। और अन्दर गया तो मेरी पत्नि ने भी पूछा कि सच में ही बम्बई जा रहे हो। मैंने कहा—हाँ और सौच के लिए चला गया। इस बीच पत्नि ने बंबई जाने की तैयारी शुरू कर दी और अभी तक तो वे मुझे रोकती थीं कि घर में अभी बच्चा हुआ है तथा आपरेशन हुआ है और मेहमान भी घर में थे, पर आज उन्होंने ऐसा कुछ न कह, तैयारी शुरू कर दी। तो मैंने भी सोचा कि युक्रांद में प्रकाशित आचार्य श्री के कार्यक्रम के अनुसार २४ दिसम्बर से २९ दिसम्बर तक आचार्य श्री के कार्यक्रम बंबई हैं, इससे और पत्नि भी कुछ नही कह रहीं हैं और अनायास बंबई जाना हो रहा है—तो चला जाऊँ।

इस घटना के पूर्व श्री भीकम भाई मेरे घर तीन बार आये और मैं भी उनके यहाँ तीन बार गया, कारण कि वो बंबई जाने वाले थे, पर मुलाकात नहीं हुई।

जब मेरी पूरी तैयारी हो गई तो मैने पत्नि से कहा कि मैं तो केवल लेटरिन हेतु घर आया था, पर तुम्हारी इच्छा है तो मैं आचार्य श्री के पास बंबई जाता हूं और मजाक में ही में कहा "संन्यासी हो जाऊंगा।" तो पत्नि कहती है कि संन्यास ही लेना था तो मेरा आपरेशन ही क्यों कराया। और इसी तरह हंसते-हंसाते मैंने बम्बई के लिए घर से विदा ली और भाई भीकम जी के घर आया तो वो भी मुझे बंबई जाने हेतु तैयार मिले और उनसे स्टेशन सीधे पहुंचने का बोलकर मैं अपनी दूकान आया। दूकान पर सभी को आश्चर्य हुआ कि यह अनायास बंबई जाने की मेरी तैयारी कैसे हुई—लेकिन मैं बिना किसी जबाब दिये स्टेशन आ गया। स्टेशन पहुंचकर ट्रेन आने पर पता चला कि टू-टायर में जगह

नहीं है, और इस कारण मेरा विचार बंबई जाने का नहीं होता था, पर अनायास ही एक कंडक्टर ने कहा कि आगे पटना बोगी है और उसमें आपको बर्थ मिल जायेगी। वहाँ मुझे बर्थ मिल गई और मेरा बंबई प्रवास शुरू हो गया। ट्रेन में श्री भीकम जी ने कहा कि आचार्य जी ने अभी संन्यास देना शुरू किया है और मैं [भीकम जी] संन्यास लेकर वापिस आऊँगा। तो मैंने कहा कि मैंने अपनी पत्नि से पूछा था तो उसने कहा था कि संन्यास लेना था तो आपरेशन क्यों कराया। इसी सब बातचीत के दौरान हम लोग बंबई आ गये।

भाई भीकम जी की सूचना के अनुसार श्री कस्तूरलाल भाई गांधी बम्बई स्टेशन पर हमें लेने आये थे। उनके साथ साथ ही हम लोग गाड़ी में रवाना हुए। बीच में मेरी आढ़त की दुकान पड़ती थी, मैंने श्री भीकम जी से कहा कि मुझे यहीं उतार दीजिए, मैं आपके साथ नहीं जाऊँगा कारण मुझे बहुत संकोच लगता है कि मैं किसी के घर जाकर उन्हें परेशान करूँ—पर भाई भीकम नहीं माने, मुझे परवश में जाना पड़ा। घर पहुंचकर खाना-पीना किया और भाई भीकम ने आचार्य जी को फोन करके सूचना दी कि मैं (श्री भीकम) और नेमी (लेखक) आये हुए हैं। फिर मिलने के लिए हम आचार्य श्री रजनीश जी की वह पवित्र भूमि जिसे देखने के लिए प्राण एकदम लालायित हो रहे थे और आचार्य श्री के दर्शन के लिए एक तड़प सी अंदर हो रही थी, फिर गांधीजी ने ही अपनी गाड़ी में वहाँ तक पहुंचा दिया। गांधीजी भी पूरे गांधीजी हैं, धन्य उनकी सरलता और सहज स्वभाव ने तो मेरी संकोच की दृष्टि को ही तोड़ दिया और उनके परिवार के लोग इतने भले और प्रेमी हैं, जिसका मुझे उनके घर जाकर पता चला।

हम करीब ४-३० बजे संध्या आचार्य श्री के निवास स्थान वुडलैण्ड पहुंचे और बिल्डिंग देखकर मुंह से निकल पड़ा कि "इतनी बड़ी बिल्डिंग में मेरे प्रभु रहते हैं।" फिर मैंने उनकी गाड़ी देखने की इच्छा व्यक्त की तो भाई भीकम जी ने एक गाड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा कि वो गाड़ी होगी। फिर दरवाजा खोला और ऊपर गये। वहाँ पहुंचकर माँ योग लक्ष्मी एवं स्वामी योग चिन्मय से भेंट हुई और उन्हीं दिनों आचार्य जी के छोटे काका श्री शिखरचंद जी एवं उनकी पत्नि, तथा श्री नरेन्द्र भाई भी वहीं थे, इन सबसे मिलने मैं दूसरे कमरे में गया, वहाँ क्रांति दीदी अपने संन्यास के वेश में मुस्कराती मिलीं। बहिन क्रांति को संन्यासी के वेश में और विशेषकर काली गुरिया में आचार्य श्री के लाकेट को देख मन में एकदम चोट लगी कि हम भी ऐसे संन्यासी बनेंगे। फिर लक्ष्मी बहिन आकर बोली कि आप आचार्य श्री से जाकर मिलें। हमने जैसे ही दरवाजे पर लगे स्वर्ण जड़ित मूठे को दबाया और दरवाजा खुला कि प्रभु सामने ही एक दिव्य ज्योति लिए हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम जाकर उनके पास ही बैठ गए, बहुत आनंद आया, उनके सिर्फ दर्शन मात्र से, कई दिनों के प्यासे नैना थे जो कि देख-देखकर ही आनंदित हो रहे थे। मैंने तो अपनी पूरी शक्ति से दोनों आंखें उनके चेहरे पर ही गड़ा रखी थीं, जो हटाये नहीं हटती थीं—बहुत दिनों में फिर से देखा था। फिर उन्हें ज्यादा देर तक नहीं देख सके, दूसरे लोगों को भी उनसे मिलना था। भाई भीकमचंद से बात होती रही, आचार्य जी बोले कि आये हो तो संन्यास लेकर ही जायें। फिर खुद ही बोले कि नेमी को तो अभी बहुत परेशानियां हैं, फिर भी संन्यास ले लेना। मेरा मन अंदर से तो राजी था, पर ऊपरी परिस्थितयों के अनुकूल संन्यास लेना मेरे को उचित न था, यह मेरी उस समय की सिर्फ भ्रम भरी बातें थीं, सच नहीं। हां, इसी बीच हँसकर भीकमचंद जी बोले नेमी तो जब घर से चल रहे थे, तो भाभी से कहा था कि संन्यास लेकर आऊँगा, तो भाभी जी ने कहा था कि अगर संन्यास लेना था तो फिर मेरा आपरेशन क्यों कराया तो आचार्य जी एकदम बोल उठे—पागल ! वह तो पानी है, निकलने दें, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। फिर हम लोग बाहर आ गये और मालूम हुआ कि ध्यान का आज अंतिम दिन है, तो चौंक गये; क्यों—कारण पूछा कि युक्रांद में तो २४ से २९ तक छपा है, लेकिन स्टेडियम नहीं मिलने से पहले रखना पड़ा है, और आज अंतिम

दिन है। जो भी हुआ ठीक हुआ फिर ध्यान के लिये स्टेडिमम पहुंचे, जहां कुछ चर्चा के बाद आचार्य जी ने ध्यान कराना शुरू किया, पर उस ध्यान की पद्धति मुझे ज्ञात न थी, इससे मैंने नहीं किया, पहले वाला Relaxation का ही ध्यान करता रहा। कई नाचते, कूदते, रोते, गाते देख मेरी समझ में नहीं आया कि यह क्या कर रहे हैं—फिर आचार्य जी चुप थे, बाद में हाथ का इशारा हुआ उसे देख मालूम पड़ा कि कुछ आचार्य जी दे रहे हैं, पर मेरी भूमि इस देन को स्वीकार न कर सकी और मन ही मन पछताता रहा कि एक दिन मिला ध्यान के लिये वह भी समझ न पाये, इसमें मेरी कोई गल्ती नहीं थी, कभी इसे नहीं किया था और न ही मुझे इसकी प्रक्रिया ज्ञात थी, और इस दिन आचार्य जी ने भी उसे नहीं दुहराया था। इससे वंचित रहा फिर ध्यान समाप्त हुआ और कई बहिनों–भाईयों की रोने की आवाज सुनाई पड़ रही थी, मैं आचार्य जी के निकट ही उनके मंच के पास पहुंच गया, वहां सिढ़डी पर ही एक बहिन फूट-फूट कर रो रही थी और आचार्य जी के स्पर्श के लिये लोग एक के ऊपर एक चढे जा रहे थे, यह सब देख मैं एकदम ठगा सा रह गया और कहा धन्य हैं ये लोग जिन्हें आचार्य जी मिल गये। फिर गांधीजी ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखकर कहा चलो घर चलें, मैंने कहा ठीक चलें। फिर आचार्य जी भी बाहर आ गये और गाड़ी में बैठकर चले गये और हम भी घर पहुंच विश्राम में चले गये। फिर दो दिन और मैं बम्बई रहा उसके बाद मुझे अहमदाबाद जाना था। इन दो दिनों में जब भी आचार्य जी से मिले वही संन्यास की बात पर कुछ कहते। भाई भीकम तो राजी हो गये कि जीवन में जो सबसे मूल्यवान है उसे पूरे संकल्प से संन्यासी होकर वरण किया जाये और इस भाँति आचार्य श्री की अद्भुत दिशा दृष्टि को जीवन के बीच घटित किया जा सके। भाई भीकम ने इस संकल्प को लिया और गेरुये कपड़े ले लिए। पर मेरी परिस्थितियों के कारण मैं राजी नहीं था और बहुत विकल्प उठ रहे थें कि क्या आचार्य जी ने जिस चीज का पहले विरोध भर दिया और अब फिर वही काम करने को कह रहे हैं, कुछ समझ में नहीं आया, उनकी माया कैसी विचित्र है। गेरुआ वस्त्र पहनना पड़ेगा, साथ में माला और माला में आचार्य श्री को भी लटकाना पड़ेगा, यह सब मेरी समझ के बाहर था। यह मेरी पहली ही आचार्य श्री के प्रति प्रतिक्रिया थी, आज तक जो कुछ भी उनसे जाना है, उसे मैंने अपनी विचार धारा से सहा पाया है। और मैंने कहा अभी दाढ़ी-बाल रखने से तो कोई पैर छू जाता है, कोई पांव लागी महाराज, कोई महाराज जी नमस्कार, जो कि मुझे बहुत विषम स्थिति में डाल देते हैं। और अब तो पूरा वेश ही बदल देना है, तब तो और भी परेशानी होगी। वह मुझे बरदाश्त न होगा कि लोग मुझे सम्मान दें और उनकी पकड़ पर मैं ठीक न उतरूँ। इसी प्रकार की चर्चा क्रांति दीदी (माँ योग क्रांति) से और अन्य लोगों से करता रहा और इसी विचारधारा को लेकर अहमदाबाद चला गया।

अहमदाबाद में पूरे समय मेरे दिमाग में आचार्य श्री के वही शब्द घूमते रहे, व जब भी समय मिलता, इसी पर विचार करता। बहुत भुलाने की कोशिश की, पर नहीं भुला पाया, इसी कारण से रोज सिनेमा भी देखता कि भूल जाऊं, जो कि कभी देखता नहीं। फिर क्या था, रात भर यही विचार कुछ समझ में नहीं आया—पर इस जागरण से मुझे अपने में कोई कमी महसूस नहीं हुई दो दिन और दो रात अहमदाबाद में काफी संघर्ष चलता रहा और आखिरी में यही सोचा कि अब सीधे इन्दौर पर से घर चले जाना है। जब बम्बई ही न जायेंगे तो फिर संन्यास कैसा—फिर अनायास ही ता: २९।१२।७० को रात्रि २ बजे एक विचित्र अनुभूति होती है, जैसे किसी ने मेरे अन्दर कुछ डाल दिया है। ऐसा लगा जैसे गले से नाभि तक कुछ जा रहा हो। यह अनुभूति तीन बार होती है और मैं एकदम इतना हल्का और संतुष्ट हो जाता हूं, जैसा पहले कभी नहीं हुआ था, फिर इसके बाद नींद लग जाती है। फिर सुबह नींद खुलती है तो एकदम शांत और आनंदित हूं और संकल्प करता हूं कि "ठीक, अब मैं अपने आपको तेरे हवाले करता हूं, तुझे जो दिखाय कर, मैं सिर्फ करूंगा।" इसी संकल्प को लेकर उसी दिन मैंने संन्यास के गेरुये कपड़े खोजने की मेरी इच्छा अपने आढ़तिये को व्यक्त

की कि मुझे बंबई जाकर आचार्य रजनीश जी के सामने संन्यास लेना है। आढ़तिया कुछ घबराया और बोला:— क्या कह रहे हो, फिर धंधा का क्या होगा, यह सब काम कैसे चलेगा। मैंने कहा घबड़ायें नहीं मैं आप सबके बीच रहकर संन्यास को पालूंगा, कोई कमजोर संन्यासी नहीं बनूंगा। जो भी संन्यासी करता है वह आपके बीच रहकर करूगा। फिर कपड़े लिये और बनने को डाल दिए और ३१।१२।७० को बम्बई के लिए रवाना हो गया।

सुबह १० बजे बंबई पहुंच गया और इस बार आढ़तिया के यहां ठहरा, गांधीजी के यहां नहीं। वहां नहाया—धोया, खाना खाया, इतने में बड़े बाबू आ गये, जो मेरे आढ़तिया हैं, बहुत अच्छे मधुर व्यक्तित्व वाले और सरल व्यक्ति हैं, जिन्हें देखकर कोई भी समझ जायेगा कि आदमी देवत, तुल्य हैं और हैं भी वैसे। फिर उनसे मैंने चर्चा की कि आज संन्यास लेने मैं आचार्य श्री के पास जा रहा हूं और उनके सामने मैं अपने संन्यास के संकल्प को लूंगा तो और जो लोग बैठे थे पूछने लगे कि फिर धंधा कौन करेगा। तो बड़े बाबू एकदम बोल उठे कि धंधा तो चालू रहेगा, संन्यास और धन्धे से क्या मतलब, धंधा तो पूरी तरह करेंगे और संन्यासी भी रहेंगे। इतनी बात करके करीब २॥ बजे दोपहर को आचार्य श्री के निवास स्थान के लिए जब बस में बैठा था तो मेरी बस वहाँ से गुजरी जहाँ वेश्यायें रहती हैं उन्हें देखने की मेरी तीव्र इच्छा होती थी, पर मैं मन को समझाता था कि क्या हो गया मुझे, क्यों इन्हें देखने में रस लेते हो। पर मजबूर था, आंखें बार-बार उसी तरफ जाती थीं— फिर बस आगे बढ़ गई पर मन वहीं था और इसी विचारधारा में ग्वालियर टेंक आ गया और वहां बस से उतरकर आचार्य श्री के निवास स्थान की ओर चल दिया। फिर बहुत ही ग्लानि से भरा हुआ मेरा मन था, पर वहाँ पहुंचते-पहुंचते मन का मेरा विकल्प शांत हो गया। दरवाजा खोलकर अंदर गया, लक्ष्मी बहिन से बात हुई, पूछा आचार्य जी जागते हैं, बोली हाँ—जाओ।

फिर मैं आचार्य श्री के निकट जाकर बैठ गया। आचार्य जी बोले: लौट आये, मैंने कहा लौट आया। क्या इरादा है: लेना है संन्यास। मैं चुप रहा, बोले अभी परेशानी हो तो रहने दो, फिर बाद में ले लेना। मैंने कहा ठीक है। फिर बोले: नहीं, नहीं, नेमी ले ही डालो। मैंने कहा: ठीक। आचार्य जी बोले: कपड़े तैयार हैं, मैंने कहा: हाँ। कहते हैं: जाओ बदलकर आओ। और मैंने स्वामी योग चिन्मय जी के कमरे में जाकर के कपड़े बदल लिए और जल्दी से आचार्य श्री के कमरे में प्रवेश कर गया। और आचार्य श्री देखकर कहते हैं, यह कलर तो बहुत ही बढ़िया है, कहाँ से लिया। मैंने धीमे से कहा: अहमदाबाद से बनवाकर लाया हूं। और अपने लेटर पेड पर ही मेरा नया नाम लिख बोले, यह रहा तुम्हारा नाम: स्वामी आनंद विजय। और फिर इसी बीच एकाएक उनके चरणों में बिना कुछ चेष्टा किए गिर पड़ा और कितनी देर चरणों को आंसुओं से धोता रहा और आचार्य श्री मुझ पर वह अमृतरूपी हाथों से अमृत बरसाते रहे, कुछ पता नहीं। एक बार चुप हो गया, फिर रोना आया। इसी बीच आचार्य श्री पूछते हैं - कहाँ ठहरे हो। कहा: कालबादेवी पर। और कहते हैं: घबड़ायें नहीं, सिर्फ घोषणा करनी है, और कुछ भी नहीं करना है, जो जैसा करते हों, करते जायें। आचार्य श्री के इस छोटे से वाक्य में इतना रस छिपा होगा, इसकी तो कल्पना ही नही थी कि कुछ नहीं करना और सब कुछ हो जायेगा। और वैसा ही हुआ। सब कुछ हो गया, जो कई जन्मों से होने को तड़फ रहा था, एकदम नया ताजा प्रफुल्लित, हल्कापन जैसे अभी पृथ्वी पर पैर रखा हो, बच्चा जैसा आनंदित और जैसे मेरे पीछे कोई भी न हो, इस दुनिया में पहुंच गया। और आनन्द विभोर हो उठा। इसी बीच मां योग लक्ष्मी कमरे में आ जाती हैं और आचार्य जी पूछते हैं: माला बनकर आई—तो कहती हैं, अभी आती है, लाकेट लगता है। और मैं इस बीच बाहर जाता हूं और कुछ सज्जन आचार्य श्री से मिलने आते हैं, फिर माला मां योग लक्ष्मी लेकर आती हैं और साथ में मैं भी आ जाता हूं, आचार्य श्री गले में अपने हाथों से माला डाल देते हैं।

इन सब घटनाओं के बीच मैं एकदम शांत रहता हूं और फिर पूछता हूं आचार्य जी से, अब पिता का नाम नहीं लिख सकता, पिता की जगह गुरु का नाम लिखना होगा, तो किसका। आचार्य जी बोले : मेरा। फिर आचार्य जी बोले अभी कीर्तन होगा, उसमें जाओ। मैंने कुछ भी न सोचा और कह दिया जाऊँगा और कुछ संन्यासी मित्रों के साथ कीर्तन में चला गया। "गोपाल कृष्णा, राधे-कृष्णा, कृष्ण मुरारी, गिरधरधारी। "इस प्रकार की धुन लगाकर सड़कों पर पागलों की तरह नाचते-गाते, मजीरा बजाते निकल सकूंगा ऐसी कल्पना भी न थी। पर आज इतना आनंद इस कीर्तन में आया कि कभी इसके पहले आया ही नहीं। कीर्तन ने तो मन के सब भ्रम ही खोल दिये— कोई पैसा देने लगता, कोई आशीर्वाद मांगता, कोई देखकर हंसता, कोई आवाज लगाता, पर वाह रे प्रेम ! सबको एक ही धारा में प्रवाहित करता। मैं सोचता क्या हो गया मुझे और मुझे कोई देखकर हंसे और मैं प्रेम से झूम जाऊं, कभी कल्पना ही नहीं थी। पहले कोई हंसता तो उसके प्रति क्रोध से भर जाता, बहिनें गले लगा लेतीं बड़ा आश्चर्य होता कि यह सब मुझे क्या हो गया, जबकि मैं किसी स्त्री से हाथ मिलाने में डरता था, इसलिए कि काम-वासना से मुक्त होने के लिए बराबर ८ साल से आचार्य जी के बताये अनुसार ध्यान करता, फिर भी नहीं गया। आज मुझे क्या हो गया है, जिसका पता ही नहीं, कहां गई वह काम वासना, बहुत आश्चर्य होकर नाच उठता और धन्यवाद देता उस वक्त को जिसने मुझे बंबई आने का मौका दिया । फिर दूसरे दिन सुबह मृदुला बहिन के यहां सक्रिय ध्यान होता था, उसे करने गया और पूरे संकल्प और लगन से किया। फिर दूकान पर आ कर स्नान किया, भोजन किया और फिर आचार्य श्री के निवास की ओर बस में बैठकर चल दिया । फिर उसी जगह पहुंचा जहां वे वेश्यायें रहती थीं, पर आज मुझमें जो परिवर्तन हुआ, उसे देख मैं आश्चर्यचकित रह गया, आज उन्हें देखने में कोई रस न था बल्कि उनके प्रति एक करुणा और दया का भाव आता था कि ये सब कैसे यहां आईं और यही सोचते हुये आचार्य श्री के निवास पहुंच गया।

(शेष अगले अंक में समाप्त)

आचार्य श्री की दो प्रवचन पुस्तिकायें :

१. पूर्व का धर्म पश्चिम का विज्ञान : मूल्य ०.५० न० पैसे
२. परिवार नियोजन : एक दार्शनिक चिंतन : मूल्य ०.७५ न० पैसे

संपर्क सूत्र : श्री भीकमचंद, जीवन जागृति केन्द्र,
३८९, हनुमानताल, जबलपुर।

आचार्य श्री के हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी साहित्य हेतु एवं
"ज्योति शिखा" त्रैमासिक पत्रिका के लिए संपर्क सूत्र :
श्री ईश्वरलाल एन. शाह
मंत्री : जीवन जागृति केन्द्र
एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं० ५३
डा० डी० एन० रोड, फोर्ट, बम्बई : १। फोन : २६४५३०

अब गहन कार्य में लगता हूं

मेरे प्रिय,
प्रेम। मेरी यात्रायें करीब करीब पूरी हो गई हैं।
जिनसे किसी जन्म में किये गये वायदे थे, वे मैंने निभा दिये हैं।
अब तो मैं एक ही जगह रुकूंगा।
जिन्हें आना है, वे आ जावेंगे।
वे सदा ही आ जाते हैं।
और शायद इस भांति मैंने उनके ज्यादा काम भी आ सकूं, जिन्हें कि वस्तुतः मेरी जरूरत है।
विस्तृत कार्य कर चुका—अब गहन कार्य में लगता हूं।
पुकार आया गांव-गांव लोगों को, अब उनके आने की प्रतीक्षा करता हूं।
ऐसा ही है आदेश अब अंतर का।
और उस आदेश से अन्यथा न तो मैंने कभी कुछ किया है, न कर ही सकता हूं।
वहां सबको मेरे प्रणाम कहें।

—रजनीश के प्रणाम
१६—१—७१

प्रति : श्री हीरालाल जी कोठारी—दांताभेरू, उदयपुर (राजस्थान)

पिछले जन्मों के वायदे

मेरे प्रिय,

प्रेम। ऐसा विगत जन्म में दिया गया अनेक मित्रों को मेरा आश्वासन था कि जब सत्य मिले तो मैं खबर कर दूंगा।

वह खबर मैं कर चुका।

भारत में मेरी यात्रायें इसलिए अब समाप्त ही हैं।

निश्चय ही भारतेतर मित्र भी कुछ हैं—उनसे संबंध सेतु बना रहा हूं।

यद्यपि, मित्रों को लिये गये वायदे की कुछ भी खबर नहीं है, आपको ही कहां है—लेकिन मुझे जो ज्ञात है, उसे करना अनिवार्य है।

अब साधारणतः मैं एक ही जगह रुकूंगा।

इससे साधकों पर ज्यादा ध्यान भी दे सकूंगा।

और जिन्हें सच ही जरूरत है, उनके ज्यादा काम भी आ सकूंगा।

वहां सबको मेरे प्रणाम कहें।

रजनीश के प्रणाम
१६. १. १९७१

प्रति : श्री मथुराप्रसाद मिश्र, जीवन जागृति केन्द्र, पथ-१ राजेन्द्रनगर, पटना-१६ (बिहार)

मानसेवी संपादक : अरविन्द कुमार। सह संपादक : आलोक कुमार पाण्डे। व्यवस्थापक : श्री आर. आर. मिश्रा
स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, ७९० राइटटाउन, जबलपुर।
मुद्रण : श्रीपाल प्रिन्टर्स, १९१, कोतवाली वार्ड, जबलपुर से मानसेवी संपादक अरविन्द कुमार के लिये मुद्रित।
वर्ष : २ ॥ १ एवं १६ जनवरी ७० ॥ अंक : ११-१२ ॥ मूल्य : १.००
॥ वार्षिक मूल्य : १२.०० ॥

ENGLISH BOOKS OF ACHARYA RAJNEESH

I. TRANSLATED FROM ORIGINAL HINDI :

(1) Path to self Realisation	Page	198	Rs.	4.00
(2) Seeds of Revolutionary Thoughts	,,	232	,,	4.50
(3) Philosophy of Non-Violence	,,	34	,,	0.80
(4) Who Am I ?	,,	145	,,	3.00
(5) Earthen Lamps	,,	247	,,	4.50
(6) Wings of Love and Random Thoughts	,,	166	,,	3.50
(7) Towards the Unknown	,,	54	,,	1.50

In Press

(8) From Sex to Super Consciousness
(9) The Mysteries of life and Death
(10) Journey Inwards
(11) Beware of Socialism
(12) God-Many Splendoured Love

II. ORIGINAL ENGLISH BOOKLETS

(13) Meditation :-A New Dimension	Page	36	Rs.	2.00
(14) Beyond and Beyond	,,	30	,,	2.00
(15) Flight of the Alone to the Alone	,,	36	,,	2.50

In Press :

(16) The Pathless Path
(17) The Occult Mysteries of Dreaming
(18) What is Yoga ?
(19) This Insane Society
(20) Freedom From Becoming
(21) The Will to the Wholeness
(22) The Forgotten Language
(23) L. S. D. —A Shortcut to False Samadhi
(24) yoga : As Spontaneous Happening
(25) The Vital Balance
(26) The Great Challenge
(27) The Open Secret
(28) The Silent Music

III. CRITICISMS ON ACHARYAJI :

(29) Acharya Rajneesh : A Glimps by V. N. Vora	Page	24	Rs.	1.25
(30) Acharya Rajneesh : The Mystic of feeling	,,	234	,,	20.00

॥ मुखपृष्ठ : श्री कमलेश शर्मा, ब्राह्मणपारा, रायपुर ॥

॥ युक्रांद ॥

॥ वर्ष : २ ॥ १ एवं १६ जनवरी ७१ ॥ अंक : १३–१४ ॥